चन्दामामा
नवम्बर १९९०

ज़रा सी दूरदर्शिता, और ढेर सा प्यार...

थोड़ी सी बचत से भी, 21 वर्ष की उम्र होने तक आपका बच्चा लखपति बन सकता है.

यूनिट ट्रस्ट के बाल उपहार वृद्धि कोष में निवेश कीजिए.

आज आपका लाडला आपकी बाहों में खेल रहा है. सुरक्षित महसूस करने के लिए आपकी गोद ही उसके लिए काफी है. लेकिन कल इसको 'कल' आपके द्वार पर दस्तक देने लगेगा. उसे बाहर की दुनिया में कदम रखना पड़ेगा... ज़िंदगी की कठिन सच्चाइयों का सामना करना पड़ेगा.

तो अपने बच्चे का भविष्य संवारने के लिए आज ही कदम क्यों न उठाए जाएं? यूनिट ट्रस्ट के बाल उपहार वृद्धि कोष में निवेश कीजिए. इस योजना के अंतर्गत एक निश्चित अवधि में थोड़ा पैसा लगाने से 21 वर्ष की उम्र होने पर आपका बच्चा लखपति हो जाएगा.

प्र. अपने बच्चे को लखपति बनाने के लिए निवेश कैसे किया जाए?

उ. अगर बच्चे का जन्म होते ही आप बाल उपहार वृद्धि निधि में निवेश करें तो आपके सामने कई विकल्प हैं. (i) बच्चे के जन्म पर रु. 1100 भरें और 15 साल तक प्रतिवर्ष भरते रहें (ii) आप 3 सालों तक लगातार रु. 3,200 प्रतिवर्ष निवेश कर सकते हैं या लगातार 6 सालों तक रु. 1,900/- प्रतिवर्ष का निवेश कर सकते हैं (iii) या आप एक बार में ही रु. 8,500/- की पूंजी लगा सकते हैं.

प्र. यदि बच्चा बड़ा हो तो?

उ. 15 वर्ष की उम्र तक के लिए अलग-अलग योजना है. बाल उपहार वृद्धि कोष की जानकारी पुस्तिका में दी गई तालिका से इसकी विस्तृत जानकारी हासिल की जा सकती है. जानकारी पुस्तिका के लिए हमें लिखिए.

प्र. बच्चों को ये उपहार कौन कौन दे सकता है?

उ. माता-पिता, संबंधी, मित्र, कंपनी या व्यावसायिक संस्थाएं.

प्र. निवेश की न्यूनतम राशि क्या है?

उ. रु. 500/- तथा उसके बाद रु. 100 के गुणकों में.

प्र. इस निवेश पर लाभ कितना होता है?

उ. प्रतिवर्ष 12.5% तथा हर पाँचवें वर्ष बोनस डिविडेंड भी.

प्र. अवधि पूर्ण होने पर भी कोई सुविधा मिलती है?

उ. रकम निकालने की बजाय बच्चा इसे यूनिट ट्रस्ट की अन्य योजनाओं में से किसी में भी निवेशित कर सकता है.

सी जी जी एफ की मुफ्त जानकारी पुस्तिका के लिए किसी भी यूनिट ट्रस्ट ऑफिस या मुख्य प्रतिनिधि या एजेंट अथवा चुने हुए हिन्दुस्तान पेट्रोलियम या इंडियन ऑयल पेट्रोल पंपों से संपर्क कीजिए. या हमारे किसी भी कार्यालय को लिखिए.

या इस कूपन को भारत डाक द्वारा यूनिट ट्रस्ट के किसी भी कार्यालय को भेज दीजिए.

कृपया मुझे बाल उपहार वृद्धि कोष की मुफ्त जानकारी भेजिए.

नाम : ____________________

पता : ____________________

भारतीय यूनिट ट्रस्ट

(सार्वजनिक क्षेत्र की वित्तीय संस्था)

- 13 सर विट्ठलदास ठाकरसी मार्ग (न्यू मरीन लाइन्स), बंबई 400 020. फोन : 2863767/6201996.
- जस्टिस बशीर अहमद सैयद बिल्डिंग, 45, सेकेंड लाइन बीच, मद्रास- 600 001. फोन : 587433/580938.
- मुलाक भवन (सिकन्दरा ब्लॉक), तीसरी मंज़िल, 6, बहादुर शाह ज़फ़र मार्ग, नई दिल्ली- 110 002. फोन : 3318638/3319786.
- 2 एवं 4 फेयरली प्लेस, कलकत्ता- 700 001. फोन : 206391, 205322.

डा य म ण्ड कॉ मि क्स

पेश करते हैं

डायमंड कामिक्स डाइजेस्ट

चाचा चौधरी - I	पिंकी - III	ताऊजी - V	लम्बू मोटू - VI	मोटू पतलू - III	फौलादी सिंह - IV	राजन इकबाल - II
चाचा चौधरी - II	बिल्लू - I	ताऊजी - VI	लम्बू मोटू - VII	मोटू पतलू - IV	फौलादी सिंह - V	राजन इकबाल - III
चाचा चौधरी - III	बिल्लू - II	ताऊजी - VII	फैन्टम - I	मोटू पतलू - V	फौलादी सिंह - VI	राजन इकबाल - IV
चाचा चौधरी - IV	बिल्लू - III	ताऊजी - VIII	फैन्टम - II	मोटू पतलू - VI	महाबली शाका - I	चाचा भतीजा - I
चाचा चौधरी - V	बिल्लू - IV	लम्बू मोटू - I	फैन्टम - III	मोटू पतलू - VII	महाबली शाका - II	चाचा भतीजा - II
चाचा चौधरी - VI	ताऊजी - I	लम्बू मोटू - II	फैन्टम - IV	मोटू पैतलू - VIII	महाबली शाका - III	चाचा भतीजा - III
चाचा चौधरी - VII	ताऊजी - II	लम्बू मोटू - III	छोटू लम्बू - I	फौलादी सिंह - I	मामा भांजा - I	चाचा भतीजा - IV
पिंकी - I	ताऊजी - III	लम्बू मोटू - IV	मोटू पतलू - I	फौलादी सिंह - II	मामा भांजा - II	तेनाली राम - I
पिंकी - II	ताऊजी - IV	लम्बू मोटू - V	मोटू पतलू - II	फौलादी सिंह - III	राजन इकबाल - I	तेनाली राम - II

डायमंड कामिक्स प्रा० लि०
2715, दरियागंज, नई दिल्ली - 110 002

चन्दामामा

नवंबर १९९०

★

अगले पृष्ठों पर

संपादकीय ... ७
मध्य-पूर्व: युद्ध के बादल ... ९
आखिर प्यार ही जीता ... ११
डाकू युवराज ... १७
मंजीरा की कहानी ... २५
चन्दामामा परिशिष्ट ... ३३
श्रीरामकृष्ण परमहंस ... ३७
राजयोग ... ४१
वीर हनुमान ... ४५
समस्या का हल ... ५३
महाकाव्य की रचना ... ५८
जैसे को तैसा ६१
प्रकृति: रूप अनेक ... ६३
फोटो परिचयोक्ति ... ६५

★

एक प्रति : ३ रुपये
वार्षिक चन्दा : ३६ रुपये

दमादम मस्त कलंदर.
हूट, हूट, इसके सामने
हर चीज़ को करूं हूट!
देता है चूं चूं का मज़ा.
श-श-श मन डोले
मेरा तन डोले.
वाऊ वाऊ,
खाऊं तो मूंछें भिगाऊं!
Lacto King
हाः, हाः, हाः, ये है मेरा साथी
क् क् क् क्वॅक क्वॅक
ब ब ब बडा मज़ेदार.
भों, भों, भों,
जी ललचाए, जीभ लपलपाए!
HTA 7604
पॅरीज़ लॅक्टो किंग —
स्वादिष्ट इतने कि हर कोई इस पर लट्टू.
Parry's
THE KING OF SWEETS

अंत

इस खेल को शुरू करने के लिए चाहिए बस एक पांसा, गोटियां और एक खिलाड़ी दोस्त.

49		47	46	45		43
36	37		39			42
35				31		
22		24	25		27	
21	20		18	17	16	15
8	9	10			13	14
7	6	5	4		2	

प्रारंभ
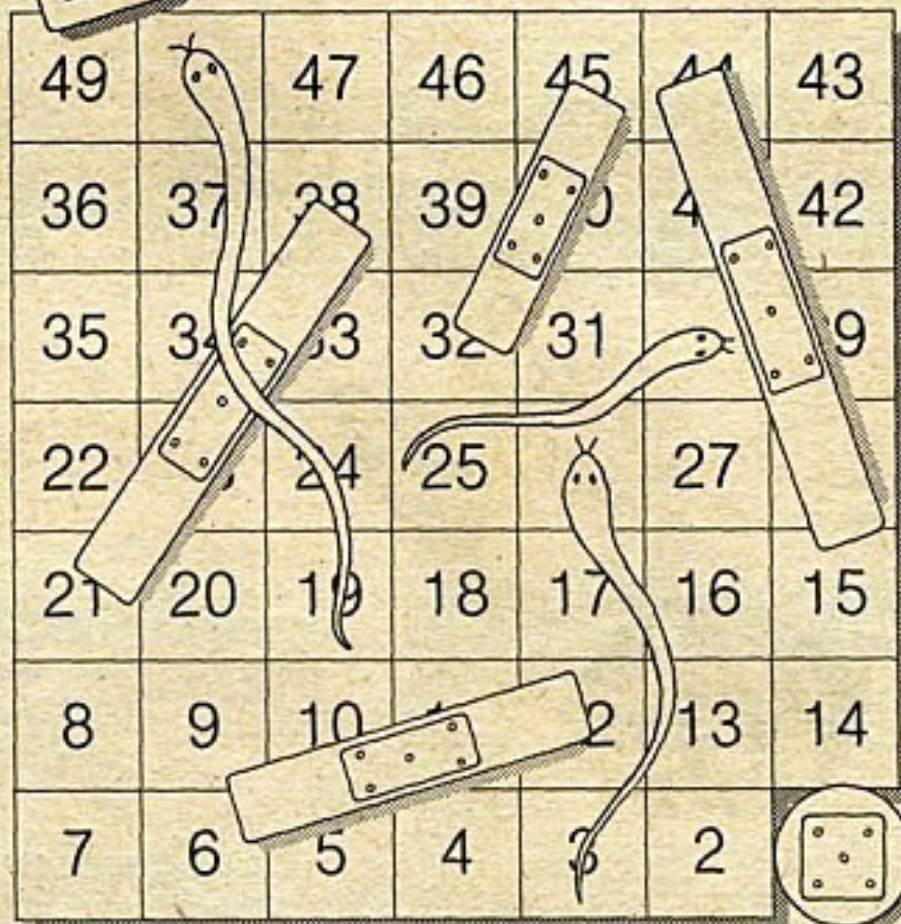
बिन्दु वाली रेखा पर काटें

यदि शैतान सांप के मुंह पर पहुंचे, तो खैर नहीं, नीचे खिसकते हुए उसकी पूंछ वाले खाने में उतरना होगा.

किस्मत के धनी हो और दोस्तीभरी पट्टी के नीचे आ गए तो सीधे पहुंचोगे दोस्तीभरी पट्टी पर चढ़ते हुए उसके ऊपरी खाने पर.

HTA 2886

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

समझ और साहस का उदाहरण

मानव जाति हमेशा सही निर्णय नहीं लेती, न ही उसे सही प्रेरणा ही मिलती रही है । अक्सर गलत ही सही पर छाया रहा है । पर कम से कम आज के युग में कुछ तो ऐसे लोग हैं जो अपनी समझ और हिम्मत से काम लेते हैं । उनके विचारों से चाहे कितने ही लोग तिलमिला उठें, लेकिन उनकी बात है ध्यान देने योग्य ।

भारत का बंटवारा इस मान्यता पर हुआ कि हिंदुओं और मुसलमानों के लिए अलग-अलग ज़मीन होनी चाहिए । पर इतिहास ने यह सिद्ध कर दिया है कि एक धर्म के अनुयायी भी हमेशा एकजुट होकर नहीं रह सकते । पाकिस्तान टूटा, बंगलादेश का जन्म हुआ । पर आज भी पाकिस्तान उन तमाम मुसलमानों को अपना नहीं सका है जो भारत छोड़कर बड़ी उम्मीदों से वहां गये थे । और तो और, पाकिस्तान अब भी कश्मीर में कुछ-न-कुछ गड़बड़ कराने के चक्कर में रहता ही है ।

एक पुराने स्वतंत्रता सेनानी और भूतपूर्व केंद्रीय मंत्री श्री अब्दुल गफ्फूर ने एक प्रमुख पत्र में एक भेंट-वार्ता के दौरान अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, ''यह कहना कि सांप्रदायिकता के आधार पर देश का बंटवारा हमारे इस भूखंड के लिए आत्मघाती था, एक पिटी-पिटायी सच्चाई को दोहराना है... अच्छा तो यह हो कि भारत, पाकिस्तान और बंगलादेश के सही सोच वाले लोग पुरानी दुश्मनी को दफना कर अपने को अपने राजनेताओं के चुंगल से आज़ाद करें और एक बार जमकर कोशिश करें कि ये सब बनावटी दीवारें टूटें और एशिया में एक बहुत बड़ी शक्ति का उदय हो ।'' यह एक ऐसा बयान है जिस पर पूरी तरह विचार होना चाहिए ।

वर्ष : ४३ नवंबर १९९० अंक : ३
एक प्रति : रु. ३/- वार्षिक चन्दा : रु. ३६/-

जो भी खाये, दोस्त बन जाये!
लड़ाकू-पढ़ाकू, मोटू-पतलू, छोटू-लम्बू, दोस्त बनेंगे
सब के सब नई हाज़मोला कैन्डी खाकर।
चटपटी है! स्वादभरी है!
खट्टी-मीठी कैन्डी की हर बात है मज़ेदार!
आए छोटे – प्यारे 'पिलो पैक' में।
साथ रख सकें, खेलते-कूदते जहाँ
भी जाएँ। पार्टी हो या पिकनिक,
घर हो या स्कूल, नई खट्टी-मीठी
हाज़मोला कैन्डी खुद भी खाओ,
सबको खिलाओ। और
प्यारे-प्यारे दोस्त बनाओ।
नई
खट्टी-मीठी
Hajmola®
CANDY
Hajmola
CANDY
everest/90/DIL/265 HIN

मध्य-पूर्व : युद्ध के बादल

पुराने ज़माने में जिसे मैसोपोटामिया कहते थे, उसी का नाम अब इराक है। ४,३५,१२० वर्ग किलोमीटर में फैला यह देश दक्षिण-पश्चिम एशिया में स्थित है। इसकी राजधानी बगदाद है। बगदाद एक जाना-माना नाम है। टाइगरिस और यूफरेटिस यहां की दो प्रमुख और विशाल नदियां हैं। वे इसी देश में से बहती हुई निकलती हैं। यहां की अधिकतर भूमि रेगिस्तान है।

इराक से लगा हुआ ही कुवैत है। यह एक बहुत छोटा देश है। इस का क्षेत्रफल केवल २४,२३५ वर्ग किलोमीटर है। यहां का अधिकतर इलाका भी रेगिस्तान ही है, लेकिन इसकी गणना दुनिया के सबसे अमीर देशों में होती है। दुर्भाग्यवश यहां के ज़्यादातर लोग गरीब हैं। दौलत तो कुछ लोगों के हाथ में है।

इराक और कुवैत, दोनों की आय का मुख्य स्रोत तेल ही है। जो तेल यहां की भूमि से प्राप्त होता है, उसी पर संसार के कई देश निर्भर करते हैं। उधर ये दो देश अपने तेल की कीमत बराबर बढ़ाते रहते हैं जिससे ये ज़्यादा से ज़्यादा अमीर होते जाते हैं।

कुवैत में १७५६ से एक शेख परिवार का शासन रहा है। सारी सत्ता इसी परिवार तक सीमित है। शासक को 'अमीर' कहा जाता रहा है और वहां का राजकुमार वहां का प्रधान मंत्री रहा है। इतना ही नहीं, बाकी सब मंत्री भी इसी परिवार के रहे हैं।

इराक का कहना है कि कुवैत उसी के बसरा प्रांत का एक अंग है। जिस ज़माने में अंगरेज़ों का सितारा चमक रहा था और वे कई राज्य गिराते और खड़ा करते थे, उसी ज़माने में उन्होंने इसे स्वतंत्र सत्ता सौंप दी। अब अचानक इसी वर्ष, अगस्त के महीने में, इराक की विशाल सेना ने कुवैत पर चढ़ाई कर दी। दोनों देशों के बीच मुकाबला तो कुछ है नहीं। इसलिए कुवैत का शेख भागकर साऊदी अरब जा पहुंचा। इराक ने आरोप यह लगाया है कि कुवैत उसके इलाके के भूतल से अवैध रूप से धड़ाधड़ तेल निकाल रहा था और पैसा बना रहा था।

अगर कुवैत में एक निरंकुश शासक सत्ता संभाले हुए था तो इराक में सत्ता एक तानाशाह के हाथों में है। और इस तानाशाह के रंग-ढंग न्यारे हैं। यह अपने दुश्मनों के विरुद्ध भयंकर से भयंकर शस्त्र चला देता है। इन शस्त्रों में रासायनिक शस्त्र भी शामिल हैं जो

एकदम अमानवीय हैं।

रासायनिक शस्त्र होते क्या हैं? यह एक प्रकार की गैस है जिसे मस्टर्ड (सरसों) गैस कहते हैं। यह बादलों के रूप में दुश्मन के इलाके पर छा जाती है। वातावरण में एक तीखी गंध भर जाती है जो लहसुन की गंध जैसी होती है। इससे बुरी तरह से जलन पैदा हो जाती है और व्यक्ति मरने लगता है। एक गैस और है। इसका नाम सरीन है। इसकी कोई गंध नहीं होती। लेकिन अगर यह सांस के ज़रिये थोड़ी-सी भी किसी के भीतर चली जाये तो उसके अंग पूरी तरह से काम करना बंद कर देते हैं और उसकी मृत्यु हो जाती है। बस, इसी तरह का यह सिलसिला है। अमरीका ने साऊदी अरब में बहुत भारी सेना भेजी है। वह इराकी जहाज़ों के आनेजाने को रोकना चहता है। वह उससे किसी तरह का लेन-देन नहीं चाहता। वह इस काम में सभी दूसरे देशों का सहयोग भी चाहता है। लेकिन सभी देश तो उसे सहयोग नहीं दे सकते। सब के अपने-अपने कारण हैं। लेकिन वे यह ज़रूर चाहते हैं कि इराक और साऊदी अरब, और उसकी सहायता कर रहे अमरीका के बीच तकरार युद्ध का रूप न ले ले।

कुवैत का शासक अमीर शेख

इराक और कुवैत में रहने वाले हज़ारों अमरीकियों और योरोपियों को इराकियों ने वहीं रोक रखा है। अगर युद्ध छिड़ गया तो उनकी जान खतरे में पड़ जाएगी। जिस समय यह लेख छपने के लिए जा रहा है, स्थिति बड़ी विकट दिख रही है।

आखिर प्यार ही जीता

एक गाँव था मधुपुरी । वहाँ विनील नाम का एक युवक रहता था । कहने को तो वह युवक था, पर था वह एकदम दुबला-पतला और कुरूप । साथ ही लंगड़ा भी था । दुबला-पतला इस कदर कि उसके हाथ सूखी टहनियों की तरह झूलते, जैसे हवा का झोंका आयेगा और उसे अपने साथ उड़ा ले जायेगा । लोग उसे हमेशा अपने से दूर रखते । फिर भी वह कभी-कभी उनके मन में अपने प्रति दया उपजाने में सफल रहता ।

विनील अकेला था । उसकी माँ उसे जन्म देकर चल बसी थी । उसके पिता को सांप ने डस लिया था । तब वह सात बरस का था । तभी से उसकी परेशानियाँ शुरू हो गयी थीं । विनील के पिता जो चार एकड़ ज़मीन उसके लिए छोड़ गये थे, उसे विनील के मामा कामतानाथ ने हड़प लिया था । गाँव के किसी बड़े बुज़ुर्ग ने विनील की तरफदारी नहीं की, और न ही किसी ने इस अन्याय का प्रतिकार किया ।

विनील जैसे व्यक्ति के लिए कोई काम-काज कर पाना असंभव था । इसलिए उसके भूखों मरने की नौबात आ जाती । यदि कोई दया करके दो-एक बासी रोटियाँ उसके यहाँ फेंक जाता तो वह उसी से गुज़र करता और अपने पेट की अग्नि को शांत करता । गाँव में केवल बूढ़ी जानकी बाई ही थी जो उसके प्रति कभी-कबार प्यार से देख लेती ।

एक दिन जानकी बाई को विनील की हालत पर बहुत दया आयी और वह उससे बोली, "देखो बेटा, न्यायानुसार तो वह ज़मीन तुम्हारी ही है । अब तुम्हारा मामा उस पर कब्ज़ा जमाये हुए है तो क्या किया जाये । तुम उसके पास जाओ और उससे

अमिता भट्टाचार्य
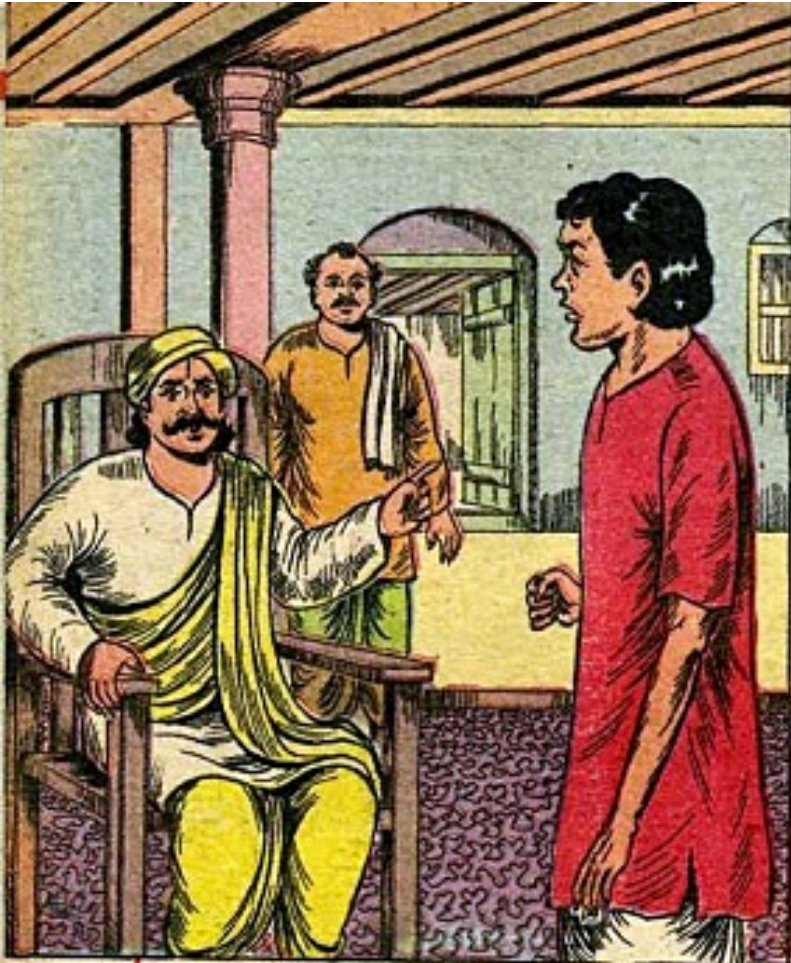
कहो कि और कुछ नहीं तो कम-से-कम आधी फसल ही तुम्हें दिया करे ताकि तुम भूखे तो न रहो ।"

विनील अपने मामा के यहाँ गया, और उससे अपनी ज़मीन के बारे में बात छेड़ी । मामा को तो मौका ही चाहिए था । वह गुस्से से लालपीला हो गया, और फिर कड़कती आवाज़ में बोला, "सुनो, फिर कभी यह बात मुँह से निकालने की जुर्रत भी न करना । तुम तो आधी फसल की बात कर रहे हो, तुम्हें फूटी कौड़ी भी नहीं मिलेगी । अब दफा हो जाओ यहाँ से, और फिर कभी इधर पाँव भी न रखना, वरना... ।" और उसने उसे गर्दन से पकड़ कर बाहर धकेल दिया ।

लाचार विनील गाँव के पटेल के पास गया और सारी बात कह सुनायी । नारायणसिंह पटेल ने कामतानाथ को बुला भेजा, फिर उससे विनील की शिकायत का ज़िक्र किया । "बताओ, तुम अपने बचाव में क्या कहना चाहते हो?" उसने कामतानाथ से प्रश्न किया ।

कामतानाथ नारायणसिंह को एक तरफ ले गया और उसके हाथ में अच्छी-खासी रकम रखते हुए बोला, "बेशक विनील मेरा भानजा है, लेकिन वह विकलांग है । खेती-बाड़ी उसके बस की नहीं । बीस वर्ष का तो वह हो ही गया है । बकी के दिन भी उसके ऐसे ही बीत जायेंगे ।"

नारायणसिंह की मुट्ठी गरम हो चुकी थी । वह अब विनील को एक तरफ ले गया और उससे बोला, "किस खेत के बारे में बात कर रहे हो? वह तो कामतानाथ का है । बेकार के बखेड़े खड़े मत करो । आइंदा कभी तुमने खेत की बात उठायी तो तुम्हें गाँव से बाहर कर दूंगा । समझे!"

उसी गाँव में, यानी-मधुपुरी में, कनकदास नाम का एक धनी और मोटा-ताज़ा किसान भी रहता था । उसके एक बटी थी वसंता । वसंता विनील की हालत जानती थी । उसके मन में विनील के प्रति दया भी थी और वह दया धीरे-धीरे प्रेम में बदलती जा रही थी ।

वह विनील को भूख से तड़पते नहीं देख सकती थी, इसलिए वह खाने के लिए चुपके से उसे कुछ-न कुछ पहुँचा आती । निःसंदेह, विनील विकलांग था, पर वह काफी तेज़ और होशियार था ।

एक दिन वसंता ने विनील से कहा, "मैं तुम से शादी करना चहती हूँ । क्या तुम्हें मंजूर है? यदि हाँ, तो मेरे पिताजी से बात करो ताकि हमारी शादी संपन्न हो सके!"

वसंता का प्रस्ताव सुनकर विनील बहुत खुश हुआ और वह सीधे कनकदास के पास जा पहुंचा । कनकदास ने विनील की बात सुनी तो वह आग-बबूला हो गया, और एक डंडे से उसे पीटने लगा । फिर एक ही हफ्ते के भीतर उसने वसंता की किसी और से शादी कर दी ।

इस घटना ने विनील को बहुत उदास कर दिया । वह अब जीना नहीं चाहता था । इसलिए वह जंगल की ओर चल दिया ताकि जंगली जानवर उसे खा लें ।

जंगल में अभय नाम के एक मुनि रहते थे । इत्तफाक से विनील की उनसे भेंट हो गयी । मुनि ने धैर्य से उसकी बातें सुनीं और बोले, "बेटा, जन्म से अब तक तुम तरह-तरह की यातनाएँ सहते आये हो । लेकिन अब ऐसा नहीं होगा । मेरे पास दो मंत्र हैं । दोनों अचूक हैं । पहले मंत्र का जब तुम जाप करोगे तो तुम्हारे सामने आने वाला कोई भी व्यक्ति तुम्हें देखकर डरकर भाग जायेगा । दूसरे मंत्र का असर यह होगा कि कठोर से कठोर व्यक्ति के मन में भी तुम्हारे प्रति प्यार उमड़ेगा और वह तुम्हें गले से लगा लेगा । मैं इन दो मंत्रों में से केवल एक मंत्र ही तुम्हें दे सकता हूँ । बोलो, तुम कौन-सा मंत्र चाहते हो?"

विनील को तुरंत अपने मामा की याद आयी जिसने सारी संपत्ति हड़प करके उसे इस अवस्था तक पहुँचा दिया था । फिर उसे गाँव के पटेल की याद आयी जिसने भारी रिश्वत लेकर उसके खिलाफ अन्यायपूर्ण फैसला सुनाया था और फिर वसंता के बाप कनकदास

की, जिसने उसे डंडे से पीटा था । वह उन सब से बदला लेना चाहता था । उसने मुनि से प्रार्थना की कि वह उसे पहला मंत्र ही दें । मुनि ने वह मंत्र दे दिया ।

मंत्र की शक्ति प्राप्त कर विनील अपने गाँव लौट पड़ा । गाँव में सब से पहले मामा कामतानाथ का घर पड़ता था । विनील ने कामतानाथ के घर का दरवाज़ा खटखटाया । कामतानाथ ने दरवाज़ा खोला । लेकिन जैसे ही उसकी नज़र विनील पर पड़ी, वह चिल्ला पड़ा, "क्यों बे लंगड़े, तू फिर आ गया यहाँ पर! तुझे बताया था न कि इस घर की तरफ फिर कभी मुंह न करना ।....फसल में हिस्सा चाहते हो?" मामा ने हुज्जत की ।

विनील ने मामा को कोई उत्तर न दिया । वह केवल अपने मंत्र का मन ही मन जाप करने लगा । बस, फिर क्या था! दूसरे ही क्षण वह अपने मामा को राक्षस-समान दिखा । मामा मारे भय के चीख पड़ा और बेहोश होकर वहीं गिर पड़ा ।

मामा को वहीं बेहोश पड़ा छोड़ विनील पटेल नारायणसिंह के घर की ओर बढ़ा । पटेल अपने घर के सामने चौपाल पर बैठा था । विनील पर उसकी नज़र पड़ी तो विनील उसे एक भयानक जानवर के समान दीख पड़ा । उस जानवर के मुंह से आग की लपटें निकल रही थीं । नारायणसिंह के उसे देखते ही होशोहवास उड़ गये और वह वहाँ से भाग
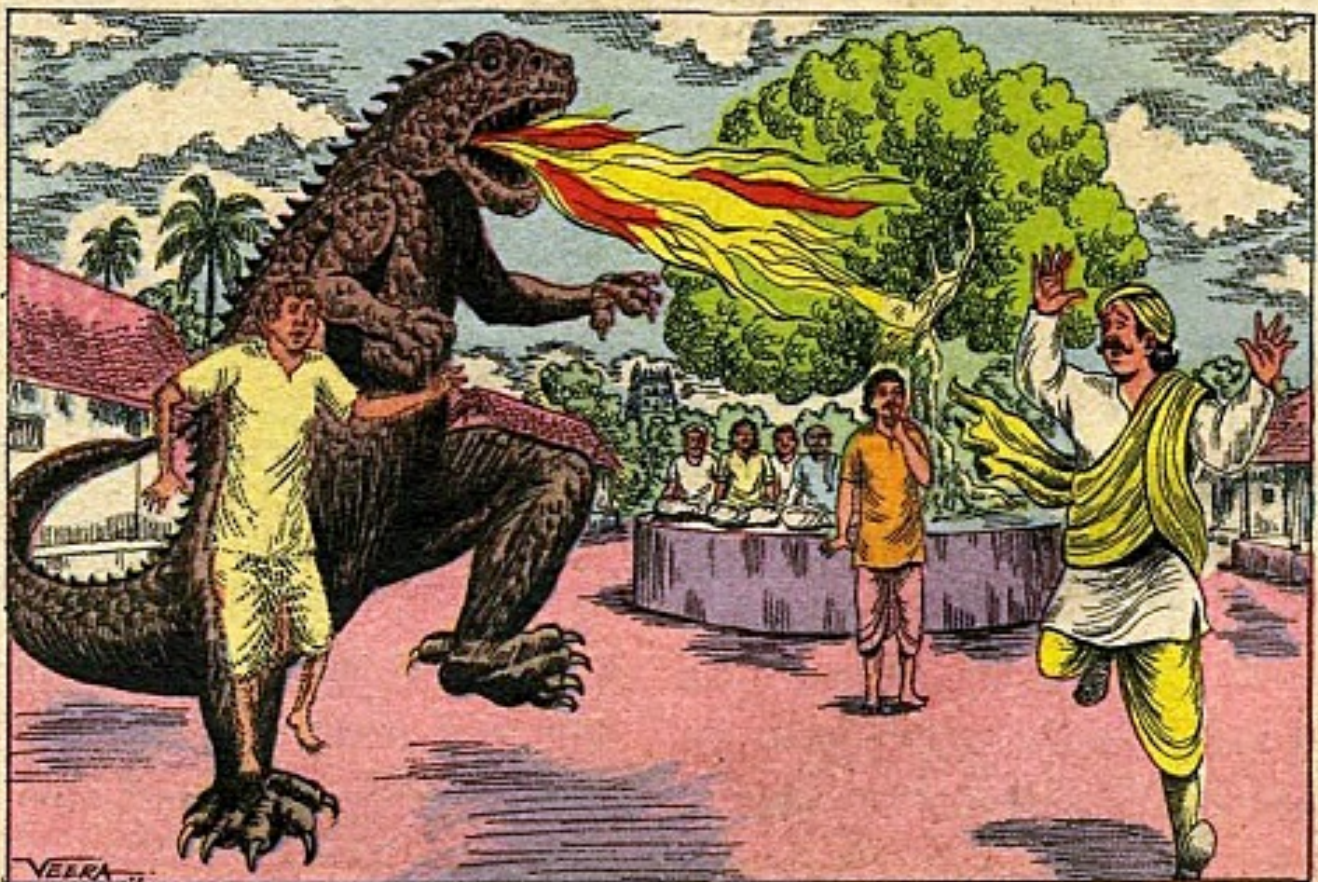
खड़ा हुआ ।

मामा और पटेल से निपटने के बाद विनील मोट-ताज़े और धनी कनकदास से हिसाब-किताब चुकता करने आगे बढ़ा। कनकदास अपने खेत पर था। वह उधर ही हो लिया। लेकिन कनकदास खेत से घर लौट रहा था, और जैसे ही उसकी नज़र विनील पर पड़ी, विनील उसे सौ फन वाले नागराज की तरह दिखा। वह प्रार्थना की मुद्रा में वहीं हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और कुछ कहने को हुआ। पर वह कुछ कह न पाया और वहीं औंधे मुँह गिर पड़ा।

अब विनील के मन में बड़ा संतोष था। उसने अपने प्रति अन्याय करने वालों से भरपूर बदला ले लिया था। गाँव में यह खबर फैल चुकी थी कि विनील के पास किसी मंत्र की अद्‌भुत शक्ति है। वह जिधर से निकलता, लोग मारे डर के इधर-उधर छिप जाते। विनील के मन में जहाँ संतोष था, वहाँ उसे अपने ऊपर गर्व भी था।

ऐसे ही कुछ समय बीता। विनील का यह संतोष अब ग्लानि का कारण बनने लगा था, सब उससे डरते थे। कोई उससे प्यार नहीं करता था।

एक दिन वह गांव के बाजू वाली अमराई से गुज़र रहा था। वहाँ कुछ बच्चे खेल रहे थे। एक बच्चा पेड़ से नीचे गिर गया और रोने लगा। विनील ने उस बच्चे को उठाया और

उसे सांत्वना देने लगा। लेकिन बच्चा तो बजाय चुप होने के थर-थर कांपने लगा।

"अरे तुम कांप क्यों रहे हो?" विनील ने उसे पुचकारते हुए पूछा।

"तुम जादूगर हो। तुम शेर बनकर मुझे खा जाओगे।" बच्चे की घिग्घी बंधी हुई थी।

विनील फिर उदास हो गया। उसे लगा अब वह बिलकुल अवांछित है। सब उससे दूर भागते हैं। कोई उससे बात करना नहीं चाहता। वह उसी उदासी में अपने घर लौट आया।

कुछ ही देर बाद उसने देखा कि उसके घर के दरवाज़े पर वसंता हाथ बांधे खड़ी है। वसंता और इतनी घबरायी हुई! उसने वसंता की घबराहट का कारण जानना चाहा। वह उसी तरह हाथ बांधे बोली, "बेशक मेरे पिता ने हमारी शादी में रुकावट डाली थी। पर तुमने उस पर ऐसा मंत्र चलाया है कि तब से उसकी ज़बान ही बंद हो गयी है। यही हालत मेरे बच्चे की हुई। मेहरबानी करके अब इस मंत्र का प्रयोग करना छोड़ दो।" और इन शब्दों के साथ वह उसके पाँव पर गिरने को हुई।

वसंता की परेशानी ने विनील को भी परेशान कर दिया। उसकी आंखों में आंसू भर आये। वह उसी दिन फिर जंगल की ओर लपका। जंगल में एक बार फिर उसकी भेंट अभय मुनि से हुई। उसने मुनि को साष्टांग प्रणाम किया, और बोला, "काफी अनुभव के बाद अब मुझे अपनी भूल का पता चला है। सब लोग मुझे मानवरूपी-दानव समझ रहे हैं। ऐसा कोई उपाय कीजिए कि मैं यह मंत्र भूल जाऊँ और लोग मुझ से प्यार करने लगें।"

विनील के भोलेपन पर मुनि हंस पड़े। "तथास्तु।" उन्होंने अपना हाथ उठाए हुए कहा, और फिर उसे दूसरा मंत्र दे दिया।

अब विनील के मन में किसी के प्रति विद्वेष और प्रतिकार की भावना नहीं थी। उसका मन अब निर्मल जल के समान स्वच्छ था। वह अब गाँव लौटा तो उसके भीतर दूसरी तरह का संतोष था। सब उससे हंस-हंस कर बातें कर रहे थे। सबके मन में उसके प्रति अपनत्व था।
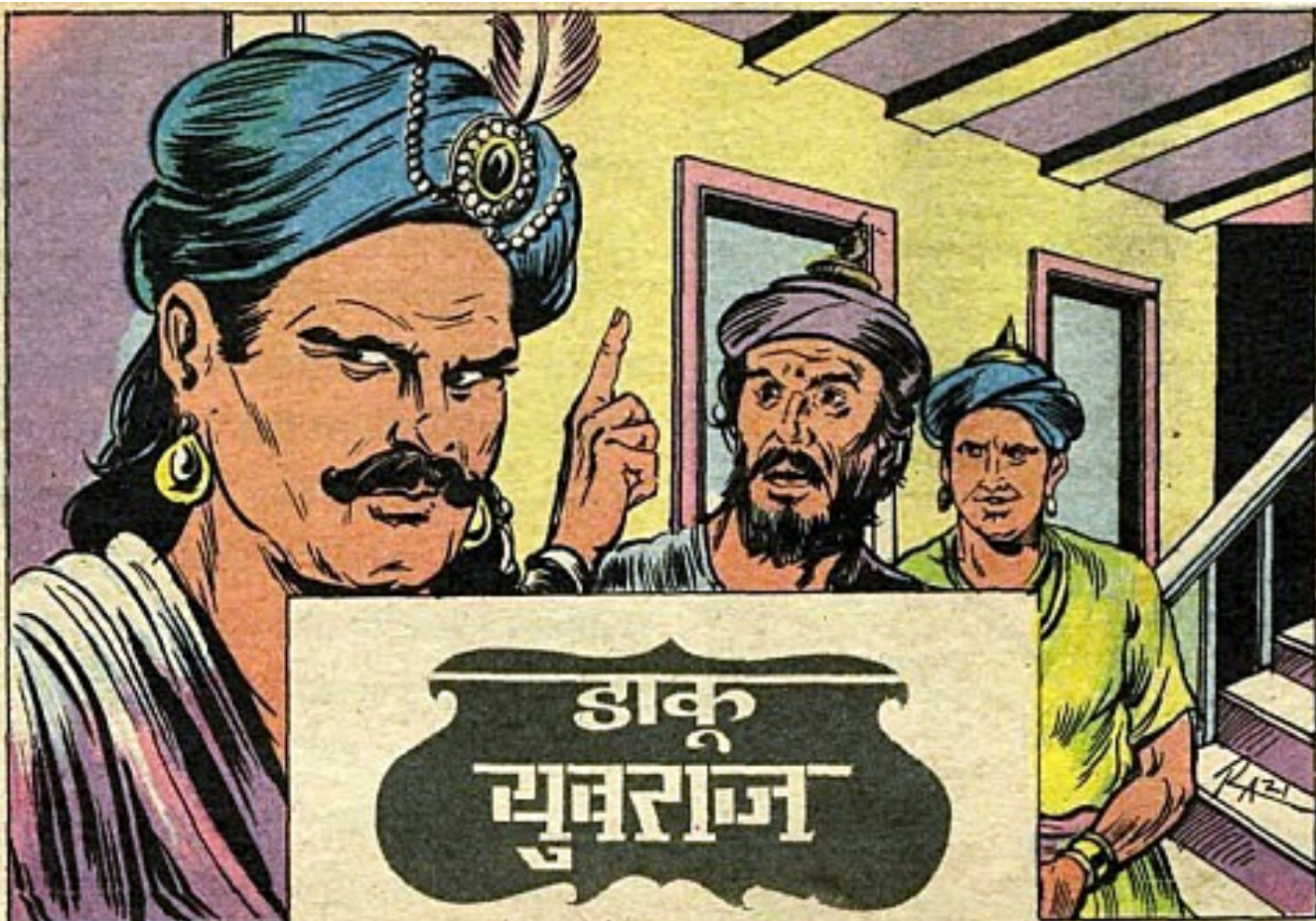
१४

(विद्रोहियों के छिपने के ठिकानों को नष्ट करने के लिए वीर सिंह स्वयं ही, शिकार की आड़ लेकर, जंगल में कुछ सेना के साथ वहां जा पहुंचा । ऋषि जयानंद ने जंगल के जानवरों को अजब ढंग से अपने वश में कर रखा था । उन्होंने वश करने का यह रहस्य युवा राजकुमार संदीप को भी बता रखा था । जानवरों ने अचानक वीर सिंह पर हल्ला बोल दिया जिससे वह और उस की सेना, सब को वहां से भागना पड़ा ।)

वीर सिंह को बुरी तरह से मुंह की खानी पड़ी । पहले भी एक बार ऐसा हो चुका था । तब वे अमृतपुर पर चढ़ाई करने वाले थे कि एकाएक बाढ़ आ गयी और सारी सेना तबाह हो गयी । लेकिन जंगल के जानवरों द्वारा खदेड़ा जाना तो बेहद शर्म की बात थी ।

वीर सिंह कुछ दिनों तक तो अपने दरबार में ही नहीं आया । सेनापति सर्पदन्त और कुछ दूसरे दरबारी बहुत उदास हो गये । लेकिन जंगल वाली इस घटना से एक लाभ हुआ कि वीर सिंह का घमंड एकदम चकनाचूर हो गया । वैसे ज्योतिष में उसका विश्वास नहीं था, लेकिन अब उसे लगा कि समय उसके साथ नहीं है, इसलिए कुछ वर्षों तक उसे चुपचाप रहना चाहिए । कुछ वर्ष ऐसे

ही बीत गये ।

बेशक उसका घमंड टूटा था, पर उसका स्वभाव वैसा ही रहा । उसके गुप्तचरों ने उसे खबर दी कि विद्रोहियों को अमृतपुरी, यानी राजा शांतिदेव के श्वसुर के इलाके से ही मदद नहीं मिल रही, बल्कि जयपुरी से भी मिल रही है ।

जयपुरी सरदार शंकर वर्मा की एक छोटी-सी जागीर थी ।

वीर सिंह हमेशा अमृतपुरी के हड़पने के ही सपने लेता, लेकिन यह काम कोई आसान नहीं था । अमृतपुरी की सेना अब काफी मज़बूत हो चुकी थी, और वहां का राजा भी अब बीमार नहीं था । हां, वीर सिंह यदि चाहता तो शंकर वर्मा को अच्छा-खासा पाठ पढ़ा ही सकता था ।

"शंकर वर्मा को अपनी दौलत का बहुत घमंड है ।" एक मंत्री ने वीर सिंह को बताया, "दौलत तो उसके पास है ही, अब उसे एक छिपा हुआ खज़ाना भी मिल गया है । उसके आदमी उसके पूर्वजों के पुराने महल की खुदाई कर रहे थे कि उन्हें सोने की एक मूर्ति मिली । कनक दुर्गा की यह मूर्ति बहुत ही सुंदर है ।"

"सुंदर न भी हो तब भी क्या फर्क पड़ता है! है तो सोने की न! सोना! इसी की तो हमें ज़रूरत है । हम धान के बदले हथियार चाहते थे । हमारी वह योजना विफल रही । अब सोना देकर हथियार पाना आसान रहेगा," वीर सिंह अपने विचारों में डूबे हुए था और वह यूँ अपने आप से बातें करता जा रहा था ।

सेनापति सर्पदन्त, वीर सिंह की बातें सुन रहा था । वह एकदम से चहक उठा, "हजूर, हुक्म हो तो हम लोग फौरन जयपुरी पर हमला कर दें!"

"अरे, अरे" वीर सिंह ने उस पर फब्ती कसते हुए से कहा, "हमने तुम्हें सुमेध की सेना का सेनापति इसलिए बनाया था कि तुम हमारे लिए खरगोश का शिकार करोगे? जयपुरी के पास अपनी कौन-सी सेना है? इसकी रक्षा तो सुमेध और अमृतपुरी ही करते

हैं! अगर हमने इस पर हमला किया तो अमृतपुरी फौरन इसकी मदद को दौड़ेगी। क्या तुम अमृतपुरी की सेना का मुकाबला करने को तैयार हो?"

सर्पदन्त का मुंह लटक गया। वीर सिंह कहता गया, "नहीं, हम खुल्लम-खुल्ला जयपुरी पर चढ़ाई नहीं कर सकते। लेकिन उसकी रक्षा करने के लिए हम उससे हमेशा कीमत ज़रूर मांग सकते हैं। तुम शंकर वर्मा को संदेशा भेजो। मुझे विश्वास है वह इतनी हिम्मत नहीं करेगा कि हमारी बात टाल जाये।"

उधर जयपुरी में खुशी की लहर दौड़ रही थी, क्योंकि पुराने महल के खण्डहरों में से एक बहुत शानदार मूर्ति प्राप्त हुई थी। और ताज्जुब! सोने की बनी कनक दुर्गा की उस सुंदर और भव्य मूर्ति पर एक खरोंच तक भी नहीं थी।

सरदार शंकर वर्मा बेहद खुश था। एक छोटा-सा मंदिर तैयार किया गया था जिसमें मूर्ति की स्थापना की जानी थी। उसके लिए दिन और समय भी तय हो चुका था।

शंकर वर्मा अपने उद्यान में टहल रहा था जबकि एक अहलकार ने उसका अभिवादन किया और बोला, "सरकार, शांतिपुर से एक संदेशवाहक आया है।"

शंकर वर्मा का माथा ठनका। "शांतिपुर से संदेशवाहक? वीर सिंह का? ठीक है। पेश करो उसे।"
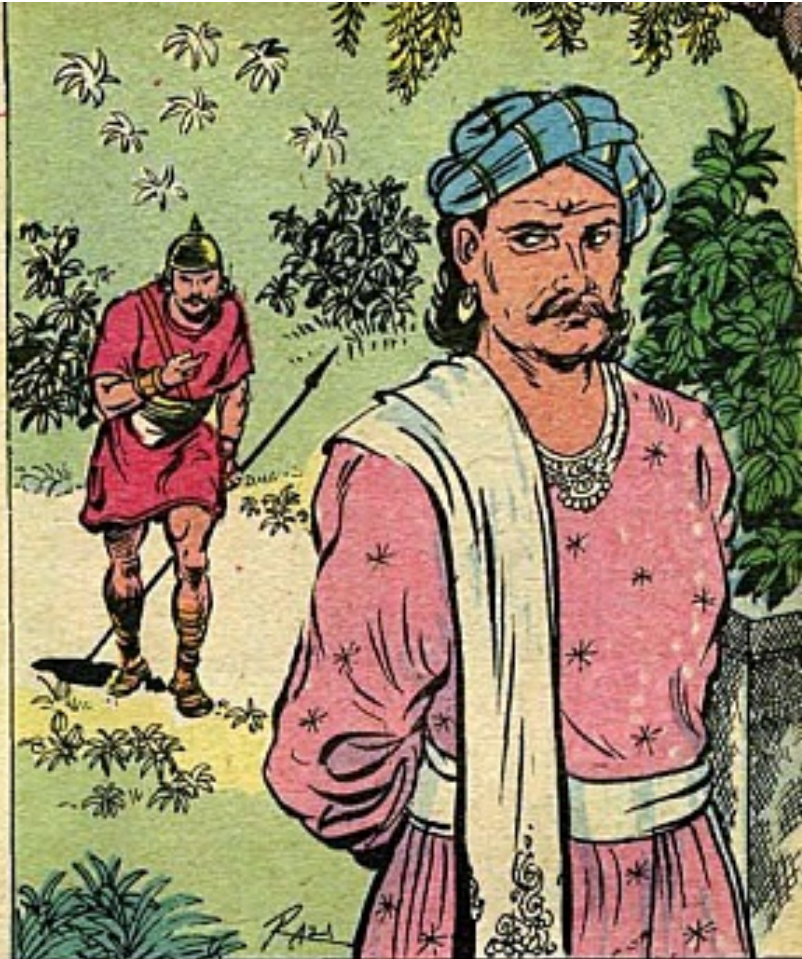
अहलकार संदेशवाहक को लिवा लाया। संदेशवाहक शंकर वर्मा के सामने थोड़ा झुका और बड़ी अदब से बोला, "हमारे राजा वीर सिंह ने आपको शुभकामनाएँ भेजी हैं और साथ में आपको अपनी देनदारी की याद दिलाने को कहा है।"

"देनदारी? हमारी ऐसी कोई देनदारी नहीं है," शंकर वर्मा ने उत्तर दिया।

"खैर, मुझे आपको बताने को इतना ही कहा गया है कि आपकी जागीर इसलिए सुरक्षित है क्योंकि आपको सुमेध से संरक्षण मिलता है। इसलिए आपको जल्द से जल्द अपना हिसाब चुकता कर देना चाहिए,"

संदेशवाहक ने सूचना देते हुए कहा ।

"तो यह बात है!" शंकर वर्मा थोड़ी देर चुप रहा । फिर वह बोला, "क्या मांग है तुम्हारे मालिक की?"

"मेरे मालिक, हाल ही में आपको मिली कनक दुर्गा की सोने की मूर्ति चाहते हैं, उसे पाकर वे बेहद खुश हो जायेंगे," संदेशवाहक संक्षेप में बोला ।

शंकर वर्मा को गुस्सा आ गया । पर उसने गुस्सा प्रकट होने नहीं दिया । वह सद्व्यवहार बनाये रखते हुए बोला, "देखो भई, मूर्ति तो किसी को सौंपने का मुझे कोई हक नहीं । मंदिर हमने बनवा भी लिया है । अभी तो यह छोटा है, पर जल्दी ही, इससे काफी बड़ा मंदिर बनवायेंगे । जब हम इस मूर्ति को उस बड़े मंदिर में ले जायेंगे, तब हम सुमेघ और अमृतपुरी के राजाओं को आमंत्रित करेंगे ।"

"सरकार, मैं तो आपको यह छोटा-सा संदेश देने आया हूँ कि या तो आप मूर्ति हमारे राजा के हवाले कर दें या उससे वंचित होने के लिए तैयार हो जायें ।" संदेशवाहक धीरे से बोला ।

उसकी आँखें ज़मीन पर गड़ी हुई थीं । एक प्रकार से यह संदेशवाहक की समझदारी ही थी । वह भला धमकाने वाली भाषा कैसे बोल सकता था ।

"ठीक है," शंकर वर्मा ने आकाश की ओर देखते हुए कहा, "संदेशवाहक, जाओ और अपने मालिक से कह दो कि हम मूर्ति को अपने से जुदा नहीं कर सकते । अगर वह चाहते हैं, तो हम उन्हें कुछ नकद दे सकते हैं । लेकिन वह भी तो एक गलत मांग को पूरा करना होगा । सुमेघ के इतने-इतने पराक्रमी राजा हो गये । उन्होंने तो ऐसी मांग कभी नहीं की । तुम जा सकते हो ।"

संदेशवाहक ने थोड़ा सा झुककर शंकर वर्मा का अभिवादन किया और वहाँ से लौट गया । शंकर वर्मा वहीं टहलता रहा ।

वैसे वीर सिंह जानता था कि उसे "न" में भी उत्तर मिल सकता है । इसलिए वह पहले से ही तैयार था । बल्कि उसने सर्पदन्त से कह रखा था कि वह जयपुरी से लगे सीमांत

पर सेना की कुछ टुकड़ियाँ तैनात रखे ताकि बिना देर किये कार्रवाई शुरू की जा सके। साथ ही वीर सिंह को यह डर भी था कि शंकर वर्मा अमृतपुरी से सहायता मांग सकता है या मूर्ति को कहीं छिपा भी सकता है। इसलिए वह ऐसी किसी भी चाल को नाकाम कर देना चाहता था।

संदेशवाहक ने सीमांत पर पहुँचकर जैसे ही सर्पदन्त को बताया कि उसे सफलता नहीं मिली है तो वह जयपुरी पर चढ़ाई करने को तैयार हो गया। लेकिन चढ़ाई करने से पहले उसने अपने सैनिकों को संबोधित करते हुए कहा, "सुनो जवानो। हम अब सीधे शंकर वर्मा के किले की ओर बढ़ेंगे। मुझे उम्मीद तो नहीं है कि वहाँ हमारा कोई मुकाबला करेगा, पर..."

"ठहरो!"

पास के किसी गुप्त स्थान से तीखी-सी आवाज़ आयी। सर्पदन्त हैरान होकर इधर-उधर देखने लगा। पर इतने में ही एक तीर पेड़ के पत्तों में से सरसराता हुआ उसके पाँव के पास आ गिरा। तीर के साथ एक पत्र बंधा था। सर्पदन्त विद्रोहियों के इस अंदाज़ से परिचित था। उसने पत्र उठाया और उसे पढ़ने लगा:

'हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि तुम यहाँ से चुपचाप लौट जाओ और शंकर वर्मा को चैन से रहने दो। इसे तुम हमारी चेतावनी समझो। —बाहुक्म युवराज संदीप।'

युवराज संदीप! अब यह विद्रोहियों की नयी चाल है। पहले तो उनके संदेश पर किसी का नाम नहीं होता था। लगता है उन्होंने अपने को किसी के नेतृत्व में संगठित कर लिया है। यह युवराज संदीप कौन है? सर्पदंत को इसकी कोई खबर नहीं थी, पर उसके मन में एक गहरा भय समा गया। अगर यह तीर सीधे उसकी छाती या माथे में आ लगता तो...? जयपुरी पर अब वह चढ़ाई कैसे करे जब कि वह अच्छी तरह जानता है कि कुछ दुश्मन इतनी चालाकी से उसका पीछा कर रहे हैं!
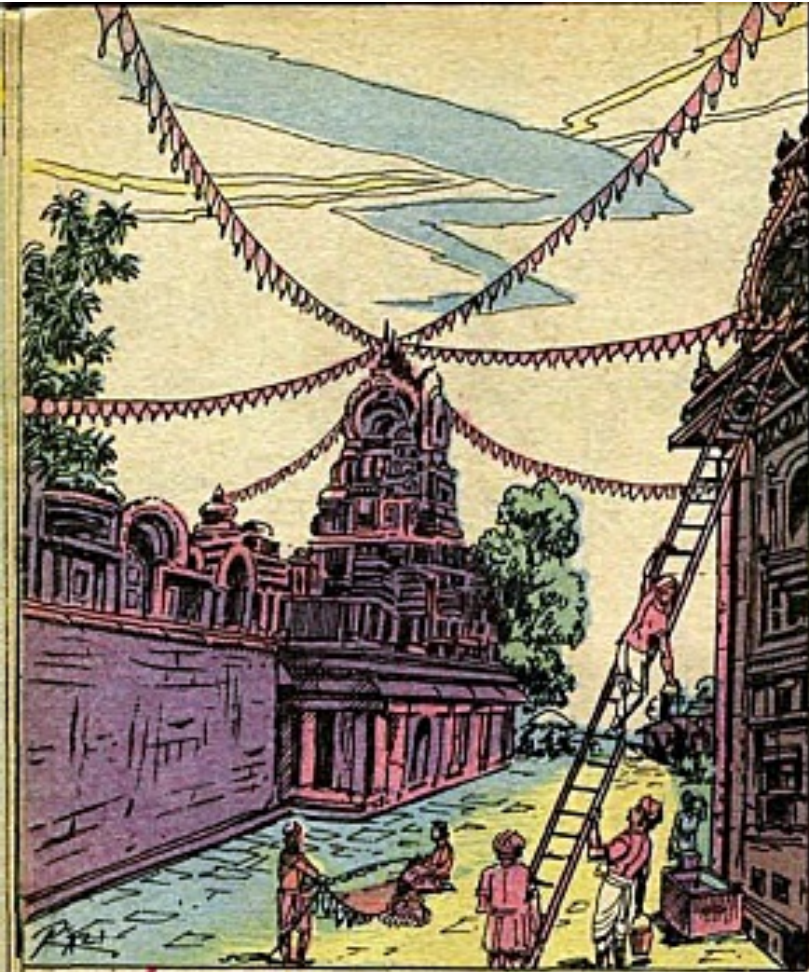
सर्पदन्त फौरन लौट जाना चाहता था, लेकिन वीर सिंह का भय भी उस पर कम हावी नहीं था। "बढ़ चलो," उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया। पूर्णमासी की संध्या थी। जयपुरी के नागरिकों को इस बात की कोई खबर न थी कि उनके सरदार को वीर सिंह से धमकियाँ मिल चुकी हैं। वे तो मंदिर में मूर्ति की स्थापना के लिए खुशी-खुशी तैयारियाँ कर रहे थे। अगले दिन ही तो नये बने मंदिर में मूर्ति की स्थापना होनी थी।

उधर जब उन्होंने देखा कि उनके सरदार के किले की तरफ सेना बढ़ रही है तो वे हैरान रह गये। वे भी कुछ दूरी बनाये रखकर सैनिकों के पीछे-पीछे चलने लगे। किसी ने लपककर शंकर वर्मा को सेना के आने की खबर दी। खबर पाकर शंकर वर्मा किले के मुख्य द्वार पर आ खड़ा हुआ।

"क्या चाहते हो?" उसने सर्पदंत से प्रश्न किया।

"कनक दुर्गा की सोने की मूर्ति।" सर्पदन्त का उत्तर था।

"क्या मैंने तुम्हारे संदेशवाहक को बताया नहीं था कि मैं कनक दुर्गा की मूर्ति को अपने से जुदा नहीं कर सकता?" शंकर वर्मा ने फिर प्रश्न किया।

"हम तुम्हें इससे जुदा होने पर मजबूर कर देंगे। ज़रूरत पड़ी तो ताकत का इस्तेमाल भी होगा।" सर्पदन्त ने कड़ककर उत्तर दिया।

शंकर वर्मा थोड़ी देर चुपचाप खड़ा रहा। फिर वह बोला, "मैं रक्तपात नहीं चाहता। तुम्हारा जो मन हो सो करो।"

सर्पदन्त के गुप्तचर उसे उसी कक्ष में ले गये जहाँ मूर्ति रखी हुई थी। उसने मूर्ति को उठा लिया। तभी वीर सिंह से एक संदेशवाहक आया और उसने सर्पदन्त के कान में कुछ फुसफुसाया। वीर सिंह ने यह कहला भेजा था कि मूर्ति को नाव में रखकर तंग नदी की राह आओ। सैनिकों के लिए यह आदेश था कि वे नाव की रक्षा करते हुए नदी

RAZI
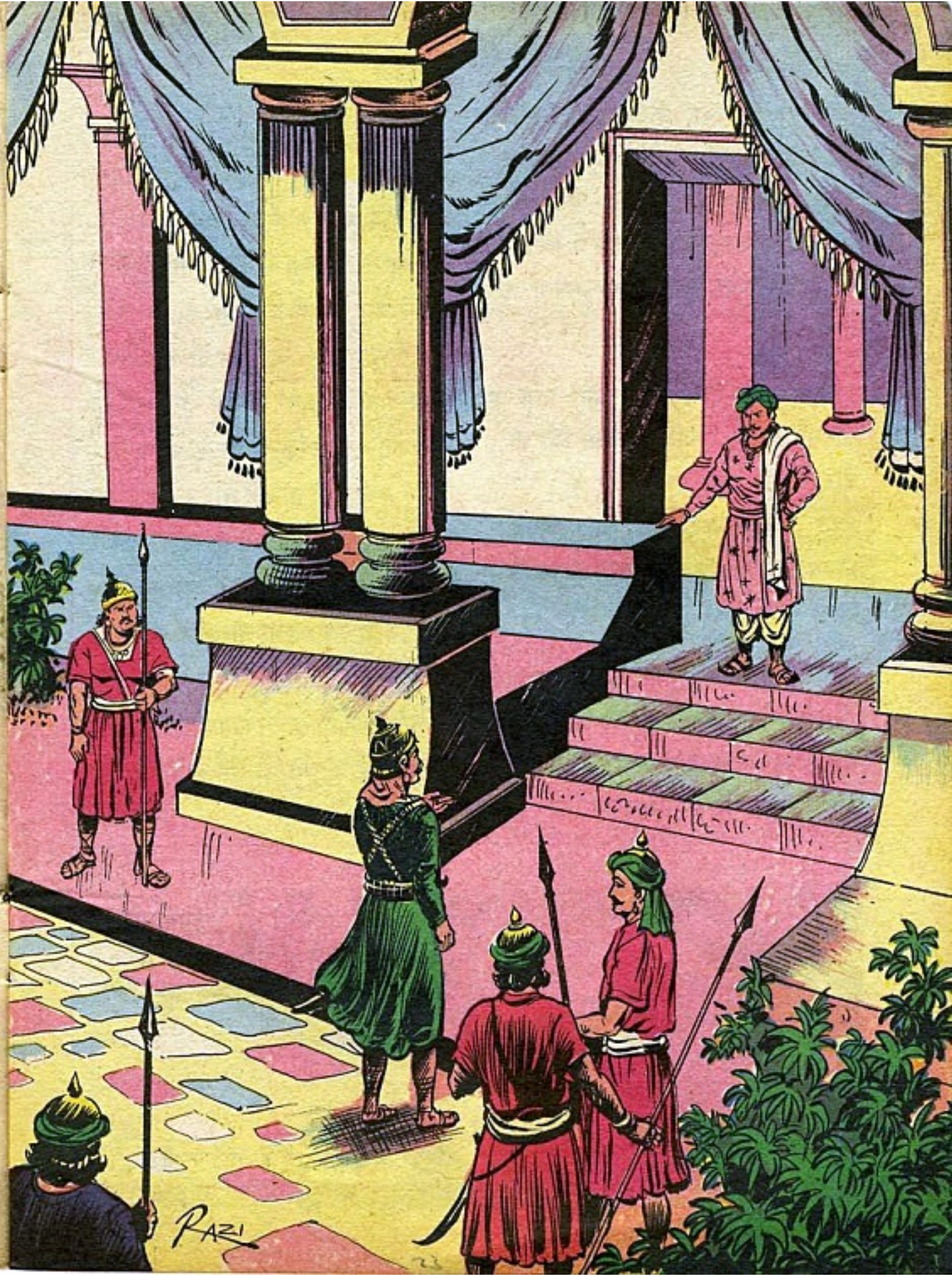
के दोनों किनारों के साथ-साथ चलेंगे। दरअसल, वीर सिंह को यह भनक मिली थी कि विद्रोही सर्पदन्त की सेना को रोकेंगे। इसलिए उसने यह तरकीब सोची थी। उसका ख्याल था कि विद्रोहियों के लिए नदी में कूदकर मूर्ति को छीनना आसान नहीं होगा।

नाव छोटी थी। उसमें मूर्ति थामे दो आदमी जा बैठे। मूर्ति चमचमा रही थी। चार नाविक चुप्पू संभाले हुए थे। रास्ता बहुत बढ़िया कट रहा था। सर्पदन्त आश्वस्त था कि वह अपना काम पूरा करने में सफल रहेगा।

नदी के रास्ते एक स्थल ऐसा आया जहाँ किनारों पर घने बरगद के पेड़ थे। सैनिक जैसे ही उनके नीचे पहुंचे, वहाँ से थोड़ी ही दूर एक पटाखा फटकर आकाश की ओर लपका।

चारों तरफ काफी चौंध पैदा हुई। सैनिकों का ध्यान उधर ही बंट गया। फिर नाव में बैठे, मूर्ति थामे दोनों आदमियों ने देखा कि एक पेड़ से कोई भूत जैसी आकृति झूमती हुई उनकी ओर आ रही है। दूसरे ही क्षण उनके हाथ से मूर्ति गायब थी। वह प्रेत एक हाथ से रस्सा थामे और दूसरे हाथ में मूर्ति लिये एक ही झपाटे में दूसरे किनारे पर जा पहुँचा था। सैनिक अभी उसी चौंध में खोये हुए थे। नाव में बैठे आदमी मुश्किल से ही 'डाकू! डाकू!' चिल्ला पाये थे कि वह प्रेत उछलकर एक घोड़े पर जा सवार हुआ और घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ वहाँ से यह जा, वह जा।

सैनिक चांदनी रात में गायब होती हुई उस रहस्यात्मक आकृति को मुँह बाये देखते ही रह गये। (क्रमशः)

मंजीरा की कहानी

राजा विक्रम अपनी ज़िद पर क़ायम थे । वह फिर उस पेड़ के पास गये, शव को पेड़ से उतारा और उसे अपने कंधे पर लादकर चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे । उतने में शव से बैताल बोला, "राजन्, आधी रात के समय इस भयानक श्मशान में आपकी कर्मठता देखकर आपकी प्रशंसा करने की इच्छा हो रही है । कभी-कभी कुछ लोग किसी कमज़ोर क्षण में भावावेश में बहकर अपना कर्तव्य और कार्य-दीक्षा भूल जाते हैं । एक बार अपने कमज़ोर क्षण में इसी प्रकार भावावेश में आकर एक निहायत बुद्धिमान और सूझबूझ वाली राजकुमारी ने अपने पिता और उसके राज्य को शत्रुओं के हवाले कर दिया था । मैं उसी की कहानी आपको सुनाऊंगा । कृपया सुनिए ताकि आपको इस बोझ का एहसास न हो ।"

फिर बैताल ने वह कहानी सुनायी:

पुराने ज़माने में कौशांबी राज्य पर राजा

बैताल कथा

धीरसिंह का शासन था । उसके कोई पुत्र न था, केवल एक पुत्री थी । पुत्री का नाम मंजीरा था । राजकुमारी मंजीरा क्योंकि अपने पिता की अकेली संतान थी, इसलिए राजा धीरसिंह उसे पुत्र मानकर ही चलता था, और पुत्र मानकर ही उसने उसे शस्त्रविद्या और शास्त्रों का ज्ञान दिया था । वह राजा के शासन में भी हाथ बंटाती थी । शासन में हाथ बंटाने के कारण वह अपने पिता के साथ अक्सर शिकार पर भी जाती थी । कभी-कभी वह अकेली भी शिकार पर जाती । उस समय उसके साथ केवल एक सहेली और एक अंगरक्षक ही होता ।

एक बार मंजीरा के मन में आया कि वह बिलकुल अकेली ही शिकार पर जायेगी । उसने अपनी सहेली को केवल सूचना-भर दी और बिना अंगरक्षक के शिकार पर निकल पड़ी ।

कौशांबी के निकट ही जंगल था । वह दिन भर उसी में इधर से उधर शिकार के लिए दौड़ती रही । शाम कब हुई, उसे पता ही न चला ।

लेकिन अब वह जंगल के दूसरे छोर पर थी और रास्ते से भटक गयी थी । चारों ओर गहरा अंधेरा था । इसलिए थोड़ी देर के लिए मंजीरा ने अपना घोड़ा रोका और कुछ सोचती-सी खड़ी रह गयी ।

इतने में नज़दीक से ही आवाज़ आयी, "आप कौन हैं?"

सुनसान जंगल में मानव-स्वर सुनकर मंजीरा चौंकी । फिर उसने मुड़कर उधर ही देखा जिधर से आवाज़ आयी थी । पास की झाड़ियों में से एक व्यक्ति बाहर आया । उस अंधेरे में उसकी लंबी दाढ़ी और जटा बने लंबे बालों के सिवा और कुछ न दिख पड़ा ।

कौन है यह व्यक्ति? इस सुनसान जंगल में क्या कर रहा है? कुछ इसी तरह के सवाल मंजीरा के मन में कौंधे । उसके पास हर तरह का ज्ञान था । बुद्धि उसकी तीक्ष्ण थी । उसने अपनी आवाज़ बदलकर उत्तर

दिया, "मैं एक सिपाही हूँ। युवरानी की आज्ञा पाकर यह देखने आया था कि क्या यह जगह शिकार के लिए उपयुक्त होगा? लेकिन भटक गया हूँ। राह नहीं सूझ रही। क्या मैं जान सकता हूँ आप कौन हैं?"

इस प्रश्न पर वह दाढ़ी-मूँछ और लंबी जटाओं वाला व्यक्ति बोला, "मैं कौन हूँ, इससे आपकी समस्या हल नहीं होगी। हाँ, आज रात के लिए आप मेरे अतिथि बन सकते हैं। कल सुबह आप लौट सकते हैं। राजधानी का रास्ता मैं आपको बता दूंगा।" यह कहकर वह व्यक्ति आगे-आगे चलने लगा।

मंजीरा कुछ देर तक तो चक्कर में पड़ी रही, फिर साहस बटोरकर वह अपने घोड़े के साथ उस व्यक्ति के पीछे-पीछे चलने लगी। व्यक्ति सीधे एक कुटिया के सामने पहुँचा। वहाँ ऊँचे-ऊँचे पेड़ और घनी झड़ियाँ थीं। अंधेरा भी यहाँ कुछ अधिक ही था। वह कुटिया के भीतर गया और एक जलती मशाल लेकर बाहर आया। मंजीरा उसे देखकर विस्मय में पड़ गयी। उसका चेहरा तेज़ से दमक रहा था और उस पर वीरता झलक रही थी। उसे उस व्यक्ति में अपूर्व आकर्षण दिखा।

अपनी ओर इस प्रकार आश्चर्य से भरी नज़रों से देखने वाली मंजीरा को देखकर वह व्यक्ति बोला, "सुबह होने में अभी काफी

देर है, युवरानी जी । आप इस बीच थोड़ा विश्राम कर लीजिए ।"

"युवरानी?" मंजीरा थोड़ा चौंकी । "आप क्या कहते हैं?"

लेकिन उस व्यक्ति ने उसे कुछ और कहने का मौका नहीं दिया । स्पष्ट तथा दृढ़ स्वर में बोला, "युवरानी जी, अब हम उस स्थिति में नहीं हैं कि झूठ बोलकर एक-दूसरे को धोखे में डाल सकें । यह बात आप अच्छी तरह समझती हैं । आप तो हर तरह का ज्ञान रखती हैं । आइए, पहले मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिए । बाकी फिर देखें ।"

मंजीरा अब बिलकुल चुप थी । उस युवक ने उसे जहाँ बैठने को कहा, वह बिना प्रश्न किये वहीं बैठ गयी । उसने जो उसे खाने को दिया, उसने चुपचाप वही ग्रहण कर लिया । खाने को तरह-तरह के फल और पीने को दूध था ।

खा-पीकर जब मंजीरा ने अपने को थोड़ा स्वस्थ महसूस किया तो उस युवक ने हंसते हुए कहा, "तो अब बताइए आप क्या-क्या पूछना चाहती हैं?"

मंजीरा थोड़ा गंभीर थी, "आप कोई भी हों, पर मुझे लगता है आपने किसी बड़े उद्‌देश्य से यह जगह चुनी है । अगर आप मुझे विस्तार से बता दें तो हो सकता है मैं आपकी कुछ सहायता भी कर सकूँ ।"

युवक मंजीरा की बात पर थोड़ा हंसा, "क्या मैं विश्वास करूँ कि आप अपने वायदे से मुकरेंगी नहीं?"

"आप क्या कह रहे हैं! मैं और अपने वायदे से मुकरूँ?" मंजीरा उसी प्रकार गंभीर थी ।

"ठीक है । तो सुनिए । मेरा नाम विजयदत्त है ।" कहकर युवक थोड़ा रुका ।

'विजयदत्त' नाम सुनते ही मंजीरा फिर चौंकी । चार साल पहले घटी घटनाएँ ताज़ा हो उठीं ।

कौशांबी के उत्तरी जंगल से लगा चंदन देश नाम का एक छोटा-सा राज्य था । वह पीढ़ियों से कौशांबी के अधीन था और

कौशांबी को राजस्व पहुँचाता था । एक बार वह कौशांबी को राजस्व न पहुँचा सका तो कौशांबी के राजा धीरसिंह ने उस पर हमला करके उसे अपने राज्य में मिला लिया । यही घटना चार वर्ष पहले घटी थी । चंदनदेश में विरूपाक्षदत्त का राज्य था । अपना राज्य छिन जाने पर विरूपाक्षदत्त अपमान और ग्लानि से भर उठा था और उसी अपमान और ग्लानि के कारण उसने आत्महत्या कर ली थी और उसकी रानी ने भी उसी के साथ अपनी जान दे दी थी ।

विजयदत्त विरूपाक्षदत्त का ही पुत्र था । वह अपने माता-पिता की अकेली संतान था और आक्रमण के समय कहीं और था । उसे आक्रमण का पता ही न चला, और न ही उसे यह पता चला कि उसके माता-पिता उसी गम में चल बसे हैं ।

उधर धीरसिंह काफी समय तक विजयदत्त की टोह में रहा । उसे संदेह था कि जैसे ही विजयदत्त को इस घटना का पता चलेगा, वह एक बार युद्ध करने ज़रूर आयेगा । धीरसिंह ने अपने गुप्तचरों से विजयदत्त की काफी खोज करवायी, लेकिन जब कुछ पता न चला तो उसने वह खोज छोड़ दी ।

वैसे तो हर मामले में धीरसिंह अपनी बेटी मंजीरा से सलाह लेता था, लेकिन इस मामले में उसने मंजीरा को कानोंकान खबर तक न लगने दी । मंजीरा इससे काफी दुखी थी । उसे यह अन्यायपूर्ण भी लगा था ।

पिता से जब बात छिड़ी थी तो वह बोले थे, "तुम नहीं जानती, बेटी, राजस्व प्राप्त करना कितना ज़रूरी है । विरूपाक्ष ने यह पहली बार नहीं किया । पहले भी ऐसा कई बार हुआ है, और कई बार हम ने उसे क्षमा किया है । लेकिन क्षमा करने की भी एक सीमा होती है । सारी संपत्ति तो वह दान-पुण्य और कलाओं के पोषण पर खर्च कर डालता था । वह यह भूल जाता था कि वह एक सामंती राजा है ।"

अपना नाम सुनते ही मंजीरा को विचारों में खो जाते देख विजयदत्त गंभीरता से बोला,

''इसमें संदेह नहीं, मंजीरा देवी जी, कि मैं ही चंदनदेश का वह युवराज विजयदत्त हूँ जिसकी आपके पिता को तलाश थी ।''

मंजीरा की आंखें झुकी हुई थीं । उसने किसी तरह हिम्मत करके उसकी तरफ गौर से देखा और फिर अपनी आखें झुका लीं । सुबह हुई तो विजयदत्त ने उसे राजधानी को जाने वाले मार्ग पर छोड़ दिया और वापस अपनी कुटिया में आ गया ।

कौशांबी के पड़ोस में एक और राज्य था कोसल । कोसल में विनयसेन का शासन था । विनयसेन और विजयदत्त के पिता, विरूपाक्षदत्त, एक ही गुरुकुल में साथ-साथ पढ़े थे और सहपाठी होने के अलावा आपस में अच्छे मित्र भी थे ।

धीरसिंह का विरूपाक्ष के राज्य पर धावा बोलना, विरूपाक्ष का आत्महत्या कर लेना-ये सब ऐसी बातें थीं जिन्हें सुनकर विनयसेन बहुत दुःखी हुआ था । उसने वादा किया था कि यदि परिस्थितियाँ अनुकूल रहीं तो वह विजयदत्त को अवश्य सैनिक सहायता देगा ।

जंगल में राजकुमारी मंजीरा से परिचय पाने के ठीक एक महीने बाद विजयदत्त ने कोसल की सेना की मदद से मंदाकिनी नदी पार करके अचानक कौशांबी पर चढ़ाई कर दी । घमासान युद्ध हुआ जिसमें धीरसिंह बुरी तरह पराजित हुआ ।

लेकिन विजयदत्त ने मर्यादा का कहीं उल्लंघन नहीं किया, न ही उसने किसी का अपमान किया । बल्कि धीरसिंह से इन शब्दों में बोला, ''राजन्, प्रतिकार मेरा ध्येय नहीं था । मुझे केवल अपनी मातृभूमि को मुक्त कराना था ताकि मेरे माता-पिता की आत्मा को शांति मिले । कौशांबी आपका है और आपका रहेगा । आप पूर्ववत् उस पर शासन करें ।''

विजयदत्त की बात सुनकर धीरसिंह दंग रह गया । उसके मुँह से निकला, ''बेटे, मैंने तुम्हारे पिता के साथ अन्याय किया । इसके लिए दण्डस्वरूप मैं बारह वर्षों तक तुम्हारा सामंत बनकर रहूँगा । इतना ही नहीं,

कौशांबी की कोई भी अमूल्य वस्तु मैं तुम्हें पुरस्कार के रूप में देने को तैयार हूँ। अब तुम ही बताओ तुम्हें क्या चाहिए।"

इस पर विजयदत्त ने हँसकर उत्तर दिया, "मांगकर जो लिया जाता है, वह पुरस्कार नहीं होता। आप हर बात में अपनी बेटी से सलाह लेते हैं। उसी से अब फिर सलाह करके तय कीजिए कि मेरे लिए पुरस्कार में देने योग्य क्या हो सकता है।"

मंजीरा ने जब पिता की बात सुनी तो बोली, "पिता जी, आप उसे एक व्यक्ति के नाते पुरस्कार देना चाहते हैं या कि राजा के नाते?"

"राजा के नाते नहीं, व्यक्ति के नाते," धीरसिंह बोला, "मैं उसकी उदारता और उस के उच्च विचारों से बहुत प्रभावित हूँ।"

इस पर मंजीरा धीमे-से मुस्करा दी और सिर झुकाकर बोली, "व्यक्ति के नाते आप एक पिता हैं। एक पिता के लिए अपनी पुत्री से बढ़कर अमूल्य और क्या हो सकता है!"

बेटी की बात सुनकर धीरसिंह एक क्षण के लिए तो भौंचक रह गया। फिर उसके मन की बात जानकर ठठाकर हँस पड़ा और बोला, "हाँ, बेटी, शायद विजयदत्त ने इसी कारण कहा हो कि मैं अपनी बेटी की सलाह लूँ। ठीक है। तो मैं अपनी यह अमूल्य रत्नमाला ही उसे पुरस्कार स्वरूप

पहनाऊँगा।"

इसके कुछ ही महीने बाद मंजीरा और विजयदत्त का विवाह बड़ी ठाठ-बाठ से संपन्न हुआ।

यह कहानी सुनाकर बैताल राजा विक्रम से बोला, "राजन्, क्या यह सच नहीं है कि मंजीरा विजयदत्त के प्रति एकदम आकर्षित हो गयी थी, पर अपने पिता से उसने इसके बारे में बिलकुल बात नहीं की। यह अलग बात है कि विजयदत्त बहुत सुलझा हुआ था और वे बच गये, वरना धीरसिंह को सपरिवार जंगलों की मिट्टी फांकनी पड़ती। बेशक, मंजीरा बड़ी बुद्धिमान थी और हर बात समझती थी, पर एक

छोटी-सी दुर्बलता के वश में होकर वह सब कुछ खो भी सकती थी । दूसरे, अपने बारे में सब कुछ जानने वाली मंजीरा को संकट से उबारने वाला विजयदत्त भी तो खतरे से बाल-बाल बचा था । है न? इन संदेहों का निदान यदि आप नहीं करेंगे तो आपका सिर फट जायेगा ।"

इस पर राजा विक्रम बोले, "दस बार बताने पर भी एक मूर्ख जो बात नहीं समझ सकता, वह बात एक बुद्धिमान व्यक्ति एक बार में ही समझ जाता है । मेधावियों को एक बार भी बताने की ज़रूरत नहीं होती । उनके लिए इशारा ही काफी होता है । मंजीरा और विजयदत्त, दोनों मेधावी वर्ग में आते हैं । दोनों ने खामोशी से एक-दूसरे के प्रति प्रेम को पहचना और उसे व्यक्त किया । विजयदत्त जानता था कि मंजीरा उसके बारे में राजा से कुछ नहीं कहेगी । इसी लिए उसने उसे जंगल से जाने दिया । उधर मंजीरा चुप रही तो विजयदत्त के प्रति प्रेम के कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि उसने जान लिया था कि मंदाकिनी नदी के पास कुटिया बनाकर रहने वाले विजयदत्त को ज़रूर कोसल के राजा से मदद मिली होगी । पिता से कहकर मंजीरा यदि सेना के साथ विजयदत्त को पकड़ने जाती तो विजयदत्त के लिए मंदाकिनी पार कर कोसल राज्य में पहुँच जाना बहुत सरल था । इसीलिए मंजीरा ने सोचा कि वह खुद कुछ नहीं करेगी, और सब कुछ विजयदत्त की सद्बुद्धि और सद्आशयता पर छोड़ देगी ।"

जैसे ही राजा ने अपनी बात पूरी की, वैसे ही बैताल शव के साथ ग़ायब हो गया और एक पेड़ की शाखा से पहले की तरह लटकने लगा । (कल्पित)

(अधार: लक्ष्मी गायत्री की एक रचना)

ज्ञानकोष

वह कौन थी?

यह सोलहवीं शताब्दी के शुरू के दिनों की बात है। मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ का किला चारों तरफ से एक विशाल सेना से घिरा हुआ था। सेना का नेतृत्व गुजरात के शासक बहादुर शाह कर रहे थे। किला पहाड़ी की चोटी पर स्थित था।

मेवाड़ के दिन हम खराब ही कहेंगे, क्योंकि वहाँ का राजा बीमार था। दरबारी परेशान थे। वे आपस में सलाह-मशविरा कर रहे थे। "युद्ध के मैदान में हमारी अगुवानी कौन करेगा?" एक सरदार बोला, "अब तो हमारी हार ही हार समझो।"

खिड़की की दूसरी तरफ़ से अचानक एक आवाज़ सुनाई दी, "बेशक, हमारी हार हो सकती है, क्योंकि दुश्मन की सेना बहुत बड़ी है। दूसरे, वे किले को अपने कब्जे में लेने के लिए तैयार होकर आये हैं। लेकिन आने वाला समय यह भी न कहे कि चित्तौड़ की रक्षा के लिए कोई भी आगे नहीं आया। इसलिए मैं तैयार हूँ।" और इन्हीं शब्दों के साथ अपने हाथ में तलवार लिये एक महिला आगे आयी।

वह महिला कौन थी?

(पृष्ठ ३६ देखिये)

क्या तुम जानते हो?

१. वह कौन हिंदू राजा था जिसने इंडोनेशिया और मलाया के टापुओं को मिलाकर एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया था?

२. उसकी राजधानी कहाँ थी?

३. तिब्बत का वह कौन-सा राजा था जिसने सबसे पहले बुद्ध धर्म अपनाया और उसे अपने देश में जगह दी? और कब?

४. उसने किस नगर की स्थापना की?

५. भारत में उसने किसे दूत बनाकर भेजा?

(पृष्ठ ३६ देखिये)

श्रावस्ती

उत्तर प्रदेश में एक गाँव है सहेत-महेत। इसमें राप्ती नदी के किनारे बसे पुराने-ज़माने के भव्य नगर श्रावस्ती के खण्डहर हैं। हमारे महाकाव्यों और पुराणों में इसका बार-बार उल्लेख आया है। उनसे यह पता चलता है कि यह नाम इसे श्रावस्त से मिला है। श्रावस्त इक्ष्वाकु वंश का राजा था। उसी ने इसकी नींव रखी।

बौद्ध काल में श्रावस्ती कोशल की राजधानी था। कोशल राज्य में बहुत खुशहाली थी। उन दिनों प्रसेनजित यहाँ का राजा था।

श्रावस्ती नगर बड़े ढंग से बनाया गया था। यहाँ कई सुंदर उद्यान, सैर-गाहें और झीलें थीं। व्यापार का यह एक प्रमुख केंद्र था। हमारे पुराने साहित्य से पता चलता है कि यहाँ कई व्यापारी रहते थे। उन्हीं में सुदत्त नाम का व्यापारी था। वह बाद में बुद्ध का शिष्य बन गया। सुदत्त की प्रार्थना पर ही बुद्ध यहाँ आये थे और जेतवन नाम के उद्यान में उन्होंने अपना डेरा डाला था। जेतवन राजकुमार जेत के नाम पर था। बाद में यहाँ पर एक बहुत बड़े विहार की स्थापना की गयी।

एक डाकू था अंगुलिमाल। उसकी कहानी तुमने सुन रखी होगी। उसने शपथ ले रखी थी कि वह अपने गले में एक हज़ार मानव अंगूठों की माला पहनेगा। वह एक जंगल में रहता था। जैसे ही कोई यात्री

उधर से निकलता, यह उसे मार डालता और उसके अंगूठे को अपने हार में पिरो लेता।

राजा प्रसेनजित ने इसे पकड़ने की योजना बनायी। अंगुलिमाल की माँ को जब इस योजना की सूचना मिली तो अपने बेटे को खबरदार करने चली। तब तक अंगुलिमाल को केवल एक ही अंगूठे की आवश्यकता थी। उसने सोचा-चलो, यह कमी माँ के अंगूठे से पूरी कर लेते हैं।

तभी बुद्ध की नज़र उस पर पड़ी और

चन्दामामा की ख़बरें

उन्होंने उसका हृदय-परिवर्तन कर दिया । वह बुद्ध का शिष्य बन गया । एक बार वह जब श्रावस्ती की गलियों में भिक्षा इकट्ठा कर रहा था तो कुछ लोगों ने उसे पहचान कर उस पर हमला कर दिया । वह चुपचाप उनकी मार सहता रहा। अपने पथ-प्रदर्शक का उसके लिए यही आदेश था । इससे उसकी मृत्यु हो गयी ।

सहेत-महेत गाँव में आज भी इस भव्य नगर के किलों और महलों के अवशेष बिखरे पड़े हैं जो उस ज़माने की याद ताज़ा करते हैं ।

दर्द कहाँ?

यदि किसी को कहीं चोट लग जाये या उसे किसी प्रकार की बीमारी हो तो शरीर में दर्द होना स्वाभविक है । लेकिन स्थिति बदलने से इस दर्द में भी अंतर आ सकता है ।

अमरीका के ओहियो विश्वविद्यालय में कुछ ख़रगोशों पर एक प्रयोग किया गया । प्रयोग ने यह सिद्ध किया कि यातनादायी स्थिति में एक समूह के ख़रगोशों ने उस प्रकार दर्द महसूस नहीं किया जिस प्रकार दूसरे समूह के ख़रगोशों ने किया । कारण? कारण यह था कि वे ख़रगोश एक ऐसे छात्र की देख-रेख में रहे जो उनके साथ बराबर खेलता था और उन्हें दिल से प्यार करता था । इसलिए ख़रगोश अपनी मस्ती में ही डूबे रहे ।
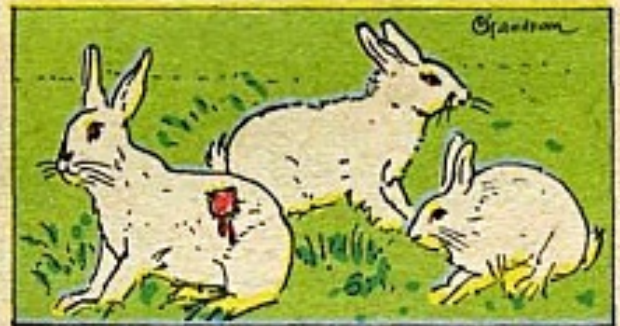
बंगाल की वह अद्‌भुत बाला

पश्चिमी बंगाल में आदरा नाम का एक शहर है । वहाँ मौसमी चक्रवर्ती नाम की एक लड़की रहती है । अभी उसका आठवाँ वर्ष चल ही रहा है, पर वह माध्यमिक परीक्षा के लिए तैयारी करने में जुटी है ।

आठ वर्ष की बच्ची और माध्यमिक परीक्षा । बोर्ड से उसे विशेष अनुमति तो लेनी ही पड़ेगी, चाहे वह असाधारण रूप से तीक्ष्ण और कुशाग्र हो ।

आओ साहित्य की दुनिया में चलें

१. मिस्र का वह कौन-सा सबसे पुराना साहित्य है जिसे संसार के सबसे पुराने साहित्य में स्थान मिलता है?

२. इतिहास का जनक किसे माना जाता है?

३. वह कौन लेखक था जो फ्रांसीसी क्रांति के पीछे एक बहुत बड़ी प्रेरणा था?

४. उसकी रचनाएँ किस प्रकार की थीं?

५. १९वीं शताब्दी का सबसे प्रभावशाली फ्रांसीसी उपन्यास किसे माना जाता है? उसका लेखक कौन था?

वह कौन थी?

मेवाड़ की रानी, करणावती ।

क्या आप जानते हैं?

१. श्रीविजय ।
२. सुमात्रा में पालेमबाँग ।
३. ७वीं शताब्दी में राजा स्ट्रांग-सान गांपो
४. ल्हासा, तिब्बत की राजधानी
५. थोनमी संभोत्रा, जो भारत से बौद्ध लेख ले गया, और साथ में शुरू की देवनागरी लिपि भी । यही लिपि तिब्बती लिपि का आधार बनी ।

साहित्य

१. द बुक ऑव द डैड

२. हैरोडोटस (४८४-४२५ ईसा पूर्व)

३. वाल्तेयर

४. व्यंग्यपूर्ण

५. लू मिज़ारेबेल । लेखक विक्टर ह्यूगो ।
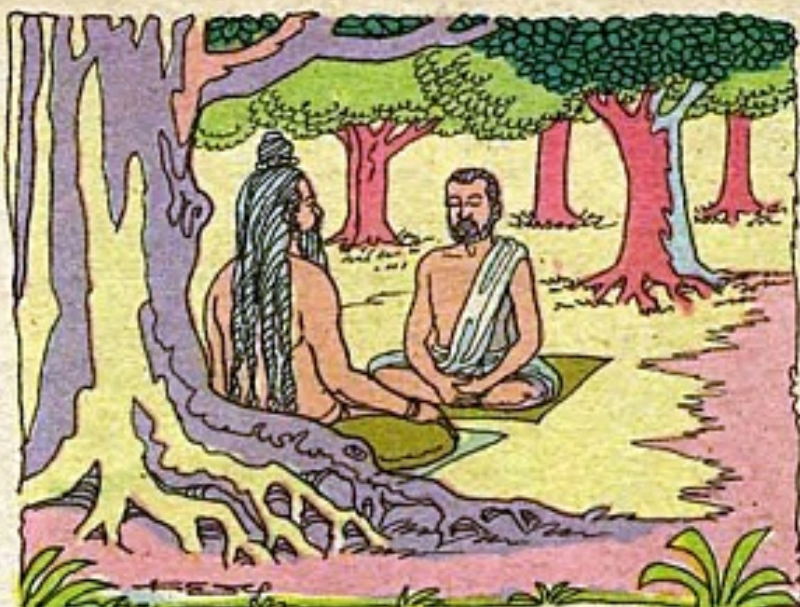
श्रीरामकृष्ण परमहंस
(५)

महान् संन्यासी तोतापुरी वेदांत के जो रहस्य श्रीरामकृष्ण को सिखाना चाहते थे, वे उन्होंने अविश्वसनीय तेजी से सीखे। तोतापुरी यह देखकर बहुत अचंभित हुए।

ये सब रहस्य पा जाने के बाद श्रीरामकृष्ण बड़ी आसानी से दूसरों से अलग पहचाने जाते थे। एक बार वह किसी नदी के तट पर बैठे थे। एकाएक एक नाविक दूसरे नाविक को पीटने लगा। इस पर श्रीरामकृष्ण पीड़ा से चिल्ला उठे। उनकी पीठ पर मार के निशान स्पष्ट दिखाई दे रहे थे।

तोतापुरी के मार्ग-दर्शन में अद्वैत-अनुभव पाने के बाद श्रीरामकृष्ण इस्लाम धर्म की तरफ मुड़े। यहां भी उन्होंने सच्चे मन से खुदा की इबादत की और इस्लाम धर्म के रहस्य पा लेने में वे काफी सफल रहे।
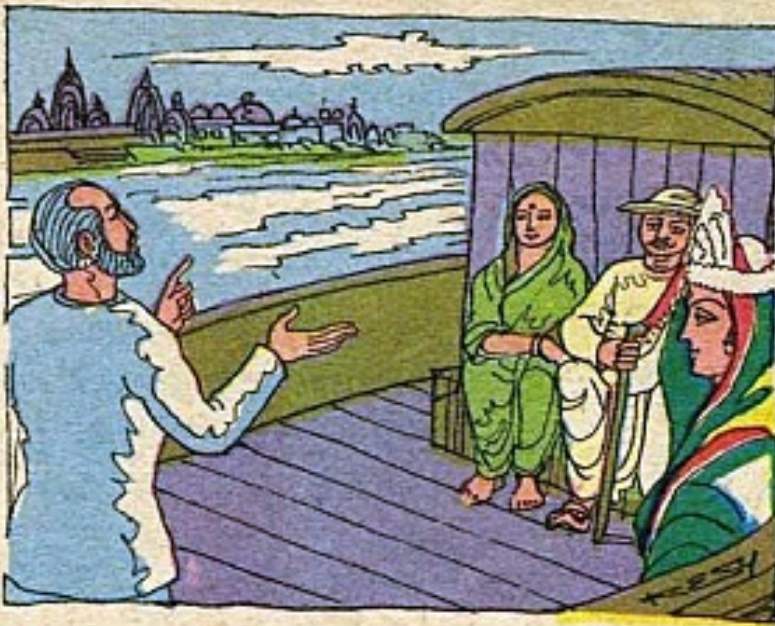
एक बार रानी रासमणि के वारिस मथुर बाबू काशी-यात्रा पर जा रहे थे। उन्होंने अपने साथ श्रीरामकृष्ण को भी लिवा ले चलने की इच्छा व्यक्त की। श्रीरामकृष्ण तुरंत तैयार हो गये और नाव में सवार हो कर उनके साथ काशी के लिए निकल पड़े। नाव जब काशी के निकट पहुँची तो श्रीरामकृष्ण को काशी स्वर्णपुरी जैसी दीख पड़ी। काशी ने अपना आध्यात्मिक रूप उनके सामने प्रकट कर दिया था।

काशी विश्वनाथ तथा केदारनाथ के मंदिरों में देवताओं के दर्शन करते समय श्रीरामकृष्ण अपने को बिलकुल भूल जाते और ध्यान में खो जाते। दूसरों की तरह वह मूर्तियों के बाह्य रूप तक ही सीमित न थे, वह उनके छिपे हुए दैविक रूप को देख पा रहे थे।
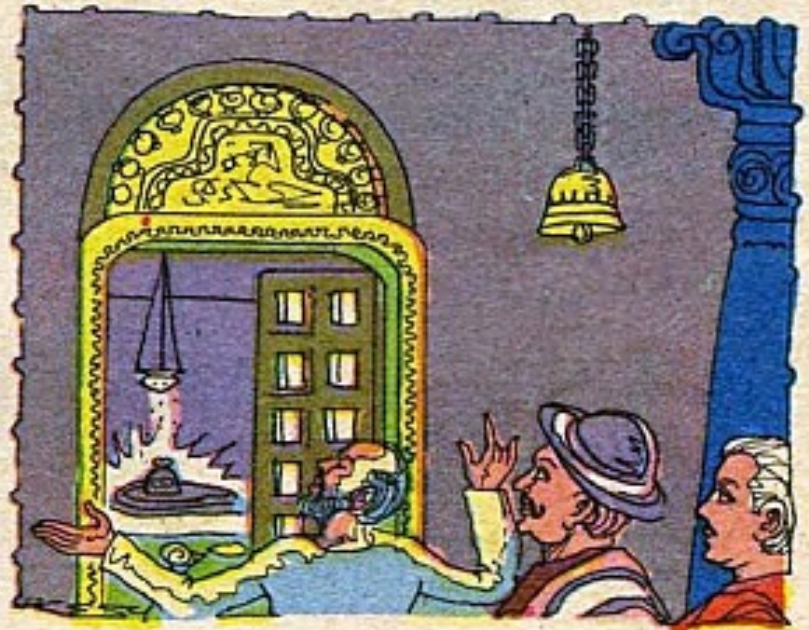
वाराणसी में उन दिनों महान तपस्वी त्रैलंग स्वामी भी विराजमान थे। श्रीरामकृष्ण ने उनके भी दर्शन किये। उस तपस्वी के पास अद्भुत शक्तियां थीं, लेकिन देखने में वह शिशु-समान थे। उनमें श्रीरामकृष्ण को शिव के अंश के दर्शन हुए, और गद्गद भाव से उन्होंने उन्हें अपने हाथों से खीर खिलायी।
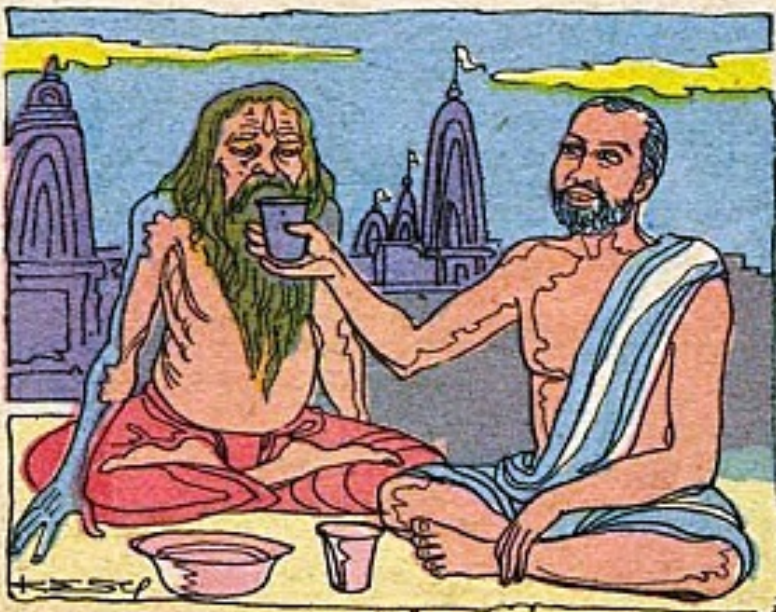
श्रीरामकृष्ण के पास, उनकी देख-रेख के लिए उनका भानजा रहता था । उसका नाम हृदय था । हृदय ने एक बार अपने गांव लौटकर अपने घर पर दुर्गा-पूजा करने का निश्चय किया । श्रीरामकृष्ण उसके साथ नहीं जा पाये, पर उन्होंने पूजा के समय वहां पहुंचने का वचन दिया । पूजा शुरू होने को थी, पर श्रीरामकृष्ण कहीं न थे । फिर एकाएक वह देवी की प्रतिमा के पास बैठे पाये गये । हृदय की खुशी का ठिकाना न था ।
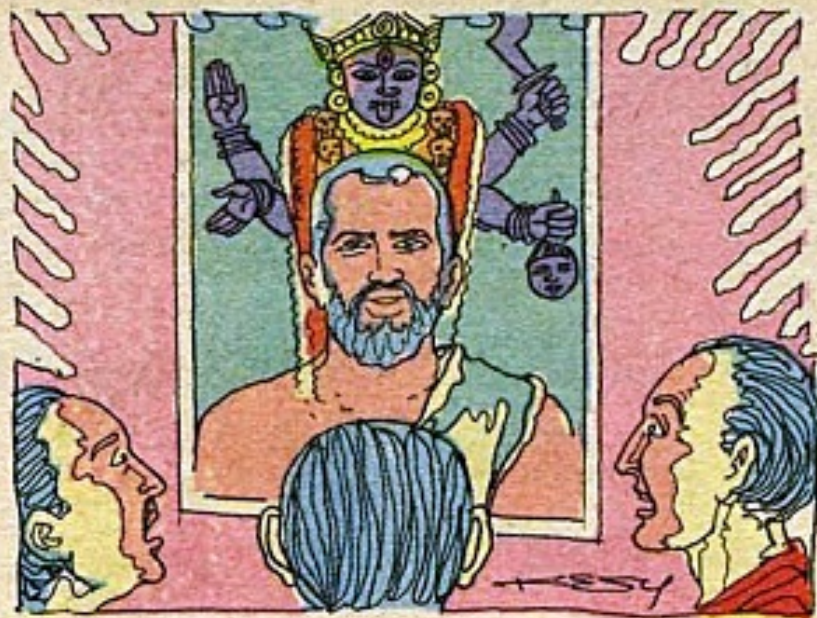
जुलाई १८७१ में मथुर बाबू बहुत बीमार हो गये । तब वह कालिघाट में थे । श्रीरामकृष्ण तब दक्षिणेश्वर में ही थे । एक रात वह ध्यान में बैठे । लेकिन थोड़ी ही देर बाद उन्होंने अपनी आंखें खोलीं और सब को बताया कि अपना भक्त चल बसा है । तब तक मथुर बाबू की खबर कालिघाट से दक्षिणेश्वर तक पहुंच नहीं पायी थी ।

उसी वर्ष श्रीरामकृष्ण की पत्नी शारदा देवी भी दक्षिणेश्वर चली आयीं । उन्होंने निर्णय कर लिया था कि वह अपने पति के सान्निध्य में आध्यात्मिक जीवन ही बितायेंगी । इसलिए वह अब समर्पण-भाव से अपने पति के श्रीचरणों में रहने लगीं ।

एक रात श्रीरामकृष्ण ने शारदा देवी को देवी मानकर मंत्र-पुष्पों से उनकी पूजा की। दरअसल, श्रीरामकृष्ण के सान्निध्य में रहकर शारदा देवी को भी कुछ आध्यात्मिक शक्तियां प्राप्त हो गयी थीं और उन शक्तियों को उन्होंने अपने भीतर अच्छी तरह आत्मसात् कर लिया था।

श्रीरामकृष्ण की बाइबल के प्रति भी उतनी ही रुचि था। एक बार उन्होंने ईसा मसीह को गोद में लिये खड़ी माता मेरी की तस्वीर देखी। तभी उस तस्वीर से उनके भीतर एक विशेष प्रकार का प्रकाश प्रविष्ट हुआ। इससे उन्हें अत्यधिक आनंद मिला।

इसके तीन दिन बाद ही श्रीरामकृष्ण एकांत में एक पेड़ के नीचे बैठे थे। एकाएक वहां एक पुरुष प्रकट हुआ और श्रीरामकृष्ण के गले से लगकर उनमें विलीन हो गया। श्रीरामकृष्ण ने फौरन पहचान लिया कि यह तेजस्वी पुरुष कोई और नहीं, भगवान् के अवतार स्वयं ईसा मसीह हैं।

(अगले अंक में समाप्य)

राजयोग

एक समय बुंदेलखण्ड पर ठाकुर वंश के राजाओं का शासन था। उसी वंश में रूपसिंह का जन्म हुआ था। रूपसिंह एकदम सुंदर, पर गरीब था। उसके पास न कोई संपत्ति थी और न ही धन। उसका अपना कहलाने योग्य कोई बंधु-बांधव भी नहीं था। उसकी कुल संपत्ति थी कुछ फटे-पुराने चिथड़े, दो टाट के टुकड़े और एक कुल्हाड़ी।

कुल्हाड़ी से रूपसिंह सुबह से दोपहर तक जंगल में लकड़ियां काटता और फिर उन्हें साढ़े तीन रुपये में बेच देता। उन साढ़े तीन रुपयों में से दो रुपये किराये के तौर पर राजसी पोशाक पर खर्च करता, एक रुपया खर्च करके एक घोड़ा किराये पर लेता और बाकी आठ आने से चने-मुरमुरे खाकर अपना पेट भर लेता।

राजसी पोशाक पहनकर रूपसिंह बिलकुल राजा ही दिखता। और फिर जब वह घोड़े पर सवार होकर मुख्य मार्गों पर घूमता तो उसकी भव्यता और बढ़ी दिखती। कुछ लोग उसे राजा ही समझते। इसी तरह वह ठाकुर वंश का गौरव बनाये हुए था। लेकिन रात के समय वह किराये की पेशाक और घोड़े को लौटा आता और अपने वही चिथड़े पहनकर एक टाट पर सोने के लिए लेट जाता और दूसरा ओढ़ लेता। फिर वह अगले दिन तड़के ही उठ जाता और कुल्हाड़ी कंधे पर रखे अपनी दिनचर्या पर निकल जाता।

एक दिन रूपसिंह जंगल में लकड़िया काट रहा था कि उसकी नाक भीनी-भीनी खुशबू से भर गयी। उसने उस खुशबू का स्रोत ढूंढ़ निकाला। वह एक चंदन के पेड़ से आ रही थी। रूपसिंह ने अपनी कुल्हाड़ी की मदद से उस पेड़ से थोड़ी-सी छाल उतार ली और फिर अपने काम में जुट गया। काम खत्म हुआ तो जंगल से लौट पड़ा।

बुंदेलखण्ड की लोककथा
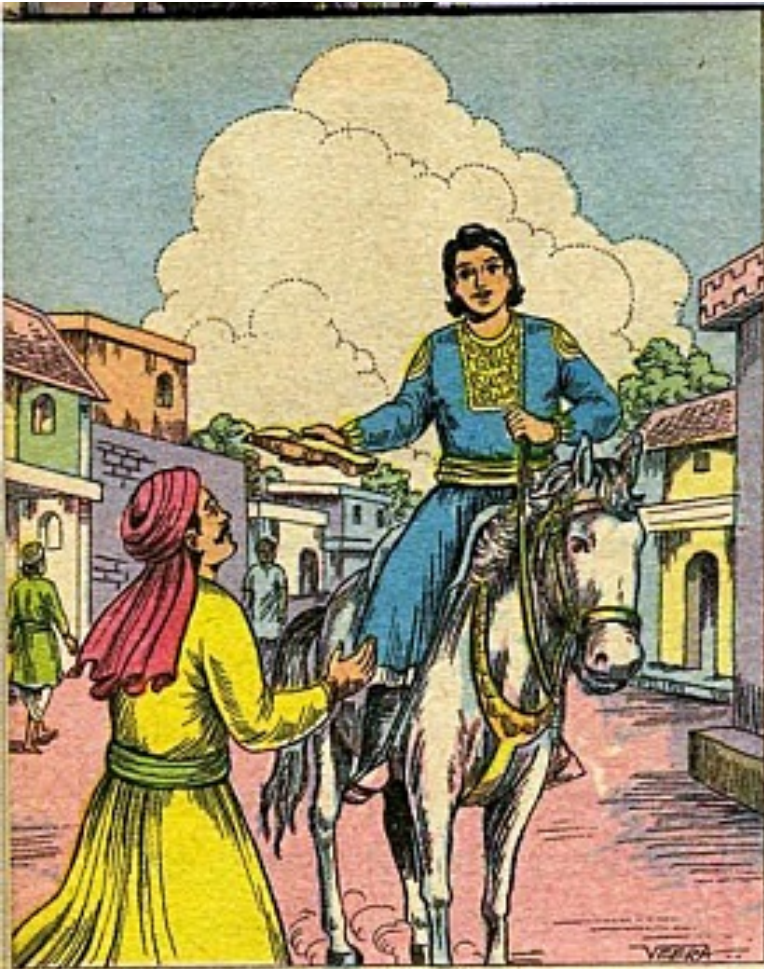
शाम के समय जब रूपसिंह अपनी राजसी-सज्जा में घोड़े पर सवार मुख्य मार्ग से निकला तो एक व्यापारी की नज़र उस पर पड़ी । उसने फौरन उसका अभिवादन किया, "प्रणाम, महाप्रभो!"

"कौन हो तुम?" रूपसिंह ने अपनी शान बनाये रखते हुए प्रश्न किया ।

"मैं एक व्यापारी हूं, प्रभु । एक देश से दूसरे देश जाता हूं । यहां मेरा काम खत्म हुआ । अब मैं सिंहलदेश जाऊंगा ।" व्यापासी ने आदरपूर्वक उत्तर दिया ।

रूपसिंह एक पल सोचता रहा । फिर उसने संभालकर रखी चंदन की छाल निकाली और उसे व्यापारी को सौंपते हए बोला, "इसे ठाकुर रूपसिंह की भेंट कहकर सिंहलदेश के राजा को सौंप देना । तुम्हारे सब काम सफल होंगे ।" और बिना एक क्षण की देर किये घोड़े को एड़ देकर वहां से गायब हो गया ।

व्यापारी ने रूपसिंह का उपहार सिंहलदेश के राजा को सौंप दिया । राजा ने चंदन का नाम कभी नहीं सुना था । इसलिए रूपसिंह का उपहार पाकर वह बहुत खुश हुआ । व्यापारी को व्यापार के लिए कई सुविधाएं भी प्राप्त हो गयीं । साथ ही राजा ने व्यापारी के हाथ रूपसिंह के लिए रत्नजड़ित पादुकाएं भेंट-स्वरूप भिजवायीं ।

व्यापारी जब लौटकर आया, तो वह उसी मुख्य मार्ग के एक चौराहे पर खड़ा होकर रूपसिंह की प्रतीक्षा करने लगा । रूपसिंह पहले की तरह ही घोड़े पर सवार होकर राजसी ठाठ में वहां से गुज़रने को हुआ ।

"नमस्कार, महाप्रभो ।" व्यापारी ने रूपसिंह का ज़ोर से अभिवादन किया ।

"कौन हो तुम?" रूपसिंह ने घोड़ा रोका ।

"श्रीमान्, मैं एक व्यापारी हूं । आपने पिछली बार मेरे हाथों जो उपहार सिंहलदेश के राजा के लिए भेजा था, वह मैंने उन्हें पहुंचा दिया था । उन्हें वह बहुत पसंद आया । उन्होंने आपके लिए ये रत्नजड़ित पादुकाएं भेजी हैं । इन्हें स्वीकार कीजिए, प्रभु ।" व्यापारी ने विनम्रतापूर्वक सारी बात कह सुनायी ।

"अब तुम कौन-से देश को जाओगे?"

रूपसिंह ने प्रश्न किया ।

"अब मैं अरब देश को जाऊंगा, श्रीमान् ।" व्यापारी ने उत्तर दिया ।

"तब तुम अरब सम्राट् को मेरी तरफ से ये पादुकाएं भेंट में देना । तुम्हारे सब काम आसानी से बन जायेंगे ।" और रूपसिंह ने घोड़े को एड़ दी, और यह जा, वह जा ।

व्यापारी ने वह उपहार अरब सम्राट् को भेंट किया । रत्नजडित पादुकाएं पाकर अरब सम्राट गद्गद हो गया । उसने सोचा, इतनी कीमती पादुकाएं भेजने वाला राजा ज़रूर कोई छोटा-मोटा राजा नहीं होगा । उसने बदले में अपने सौ चुने हुए घोड़े रूपसिंह के लिए भेजे । अरबी घोड़े तो वैसे भी श्रेष्ठ माने जाते हैं । व्यापारी के हाथों अपने घोड़े सौंपते समय अरब सम्राट् ने कहा, "रूपसिंह ठाकुर को हमारा सलाम भी पहुंचाना और उन्हें कहना कि घोड़े हमारी तरफ से एक मामूली-सा तोहफा हैं । और यह भी कि उनका तोहफा लासानी है ।"

बड़ी सावधानी से उन सौ घोड़ो के साथ व्यापारी वापस अपने देश लौटा, और फिर उसी चौराहे पर खड़ा होकर रूपसिंह का इंतज़ार करने लगा । शीघ्र ही रूपसिंह घोड़े पर सवार, उसे सरपट दौड़ाता हुआ वहां आ पहुंचा, व्यापारी को देखा तो रुक गया ।

व्यापारी ने रूपसिंह को सारी बात कह सुनायी । अरब सम्राट् द्वारा भेजे गये सौ घोड़े भी वहीं पास में एक खुली जगह पर खड़े थे । रूपसिंह ने उनपर एक उड़ती हुई नज़र डाली और भीतर फुरफुरा उठा । फिर उसने व्यापारी से प्रश्न किया, "अब तुम कौन से देश जाओगे?"

"मैं फिर सिंहलदेश जाऊंगा ।" व्यापारी ने उत्तर दिया ।

"तो ठीक है । सिंहल नरेश को ये सौ घोड़े मेरी ओर से भेंट-स्वरूप पहुंचा दो ।" और इतना कहकर रूपसिंह घोड़े को दौड़ाता हुआ हवा से बातें करता गायब हो गया ।

व्यापारी ने उन सौ अरबी घोड़ों को सिंहल नरेश को पहुंचा दिया । सिंहल नरेश उन घोड़ों को पाकर फूला न समाया । उसे लगा कि रूपसिंह वाकई मित्रता के योग्य है । उसने व्यापारी से यह भी जाना कि रूपसिंह युवा है, सुंदर है और अपनी शान-बान में निराला

है। इससे बढ़िया वर अपनी बेटी के लिए और कहां मिलेगा, सिंहल नरेश ने सोचा, और उसने अपना निर्णय व्यापारी को बताते हुए कहा, "मैं अपनी इकलौती बेटी का हाथ रूपसिंह के हाथ में देना चाहता हूं। तुम्हारे साथ ये सब वस्त्र, आभूषण और कुछ सेवक भेज रहा हूं। तुम रूपसिंह तक मेरा यह संदेशा पहुंचा दो।"

व्यापारी रूपसिंह का ठिकाना तो जानता नहीं था। इसलिए वह वहीं, उसी चौराहे पर खड़ा, उसका इंतज़ार करने लगे। साथ में उसके सिंहल नरेश द्वारा भेजे गये सेवक और नज़ारने भी थे। शाम को हमेशा की तरह रूपसिंह उसी ठाठ-बाठ में, घोड़े पर सवार, वहां से गुज़र रहा था कि उसकी नजर व्यापारी पर पड़ी। वह फौरन रुक गया। व्यापारी ने रूपसिंह का विनम्रतापूर्वक अभिवादन किया और सिंहल नरेश की ओर से सारी बात कह सुनायी। रूपसिंह ने वस्त्र और आभूषण स्वीकार करते हुए व्यापारी से कहा कि अगले दिन वह उसे उसी चौराहे पर उसी समय मिले। फिर वहां से ओझल हो गया।

दूसरे दिन लकड़ियां बेचने से रूपसिंह को जो कमाई हुई, उससे उसने किराये की पोशाक और घोड़े नहीं लिया, बल्कि सिंहल नरेश द्वारा भेजे वस्त्र और आभूषण पहने और घोड़े के बजाय पालकी ली और उसी में बैठकर निश्चित स्थान पर आ पहुंचा। तब तक वह व्यापारी और उसके साथ वे सेवक भी वहां पहुंच गये थे। अब वे सब सिंहल देश के लिए चल पड़े।

सिंहल देश पहुंचे तो वहां उनका ज़ोरदार स्वागत हुआ। विवाह की तैयारियां तो पूरी थीं। ऐसा भव्य समारोह हुआ कि देखने वाले चकित रह गये। सिंहल नरेश का कोई पुत्र तो था नहीं। इसलिए बाद में रूपसिंह ने ही वहां की बाग-डोर संभाली और कई वर्षों तक वहां शासन करता रहा। चारों तरफ सुख-शांति का साम्राज्य था।
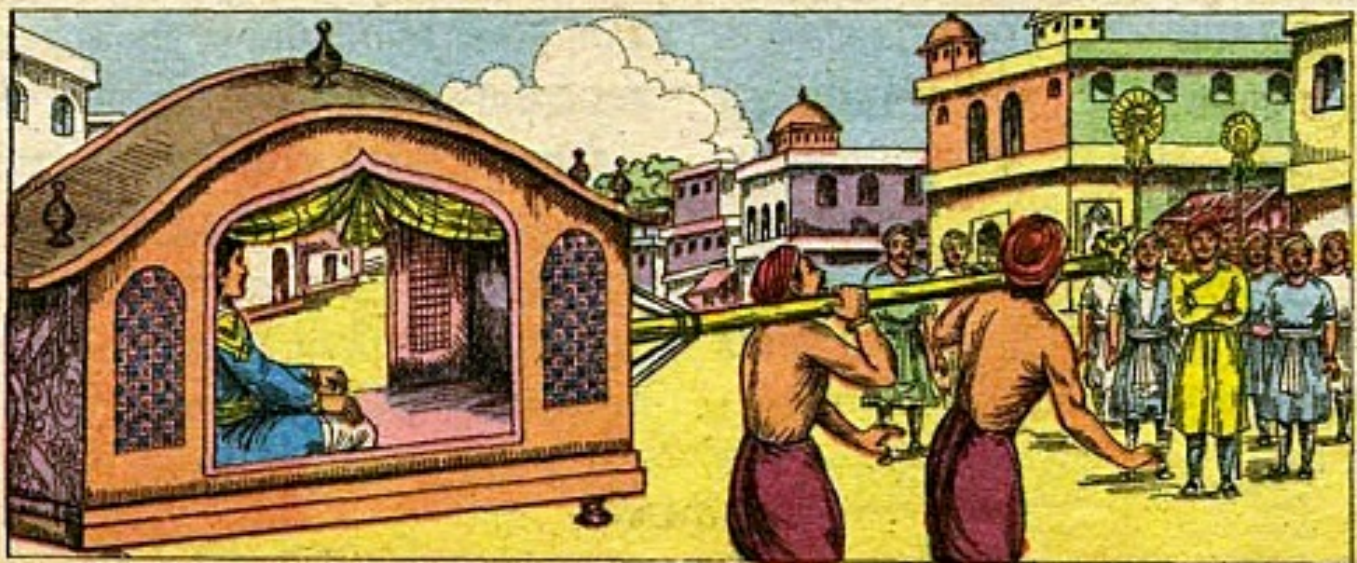
वीर हनुमान

राम सुग्रीव को अपने साथ लेकर किष्किंधा के लिए चल पड़े । सुग्रीव के गले में गजपुष्पी लता थी । सुग्रीव और लक्ष्मण, दोनों आगे-आगे चल रहे थे । हनुमान, नल, नील तथा तार पीछे-पीछे! राम बीच में थे ।

रास्ते में घने पेड़ों से भरा एक महारण्य दिखाई दिया ।

राम ने उस अरण्य के बारे में सुग्रीव से कुछ जानना चाहा । सुग्रीव ने चलते-चलते ही उत्तर दिया:

"एक समय यह अरण्य मुनि वाटिका था । हर समय यहाँ के पेड़ ठंडी छाया देते और कंद मूल-फल यहाँ सदा मिलते रहते । यहाँ सप्तजन नाम के तपस्वी थे जो सशरीर स्वर्ग लोक सिधारे । अब यहाँ कोई प्रवेश नहीं कर सकता । पशु-पक्षी भी यहाँ जायें तो उनका बाहर निकल पाना संभव नहीं । हाँ, अप्सराओं के नाच-गान के स्वर यहाँ अवश्य सुनाई देते हैं । कई प्रकार के फूलों की सुगंध भी यहाँ से आती रहती है । आप पेड़ों के ऊपरी भाग पर कुछ कालिख सी देख रहे हैं न? उसका कारण यह बताया जाता है कि वहाँ एक आश्रम में सदा त्रेताग्नियाँ जलती रहती हैं ।"

यह वृत्तांत सुनकर राम-लक्ष्मण ने सप्तजनों का ध्यान किया और फिर उस अरण्य को नमस्कार किया ।

काफी दूर चलने के बाद वे सब किष्किंधा पहुँच पाये ।

किष्किंधा पहुँच कर वे पेड़ों के पीछे छिप गये । सुग्रीव ने एक बार चारों ओर देखा और फिर ऊँची आवाज़ में बालि को ललकारा, और राम से अनुनय किया कि वह इस बार अपना वचन पूरा करें ।

"ठीक है, अब मैं तुम्हें आसानी से पहचान सकता हूँ, क्योंकि अब तुम्हारे गले में लता जो है । तुम्हें भयभीत होने की ज़रूरत नहीं । मैं एक ही वार में बालि को धराशायी कर दूँगा । झूठ मैं कभी बोला नहीं, चाहे मुझे कितने भी कष्ट क्यों न सहने पड़ें । इसलिए अब तुम निश्चिंत हो कर बालि को ललकारो ।" इस तरह रामने सुग्रीव को आश्वस्त किया ।

सुग्रीव ने अब पूरे जोर से चिल्लाकर बालि को ललकारा । उसका स्वर चारों ओर गूँजने लगा ।

उस गूँज को सुनकर वन में विचरने वाले पशु-पक्षी भी मारे डर के सिहर उठे । उन में भगदड़ मची ।

सिंहनाद-सी उस ललकार को अंतःपुर में विश्राम कर रहे बालि ने भी सुना । वह अचंभे में आ गया । सुग्रीव में इतना साहस? पहले तो कैसे कायरों की तरह भागा था! अब यह मुझसे युद्ध करना चाहता है । वह तुरंत अपने अंतःपुर से बाहर की ओर

लपका ।तभी बालि की पत्नी तारा ने उसे रोका, "क्या रात के इस समय आप सुग्रीव से युद्ध करने जायेंगे? सुबह भी तो होगी! फिर इसमें कहाँ का पुरुषार्थ है! सुग्रीव आपसे काफी छोटा है । एक बात मुझे और खटक रही है । व्यक्ति युद्ध के मैदान से भाग खड़ा हुआ हो और फिर लौटकर युद्ध करने के लिए तैयार हो तो वह ज़रूर किसी के शह पर आया होगा । आप यह मत मानकर चलिए कि आप हर किसी को युद्ध में परास्त कर सकते हैं । सुग्रीव बुद्धिमान है । उसने अपनी और आपकी शक्ति का अच्छी तरह से अनुमान लगा लिया होगा । यदि वह आपसे युद्ध करने आया है तो जरूर उसके पीछे कोई पराक्रमी है । जंगल से लौटे अंगद ने समाचार दिया था कि उसने इक्ष्वाकु वंशी दशरथ पुत्र राम और लक्ष्मण को ऋष्यमूक पर्वत पर देखा है । ऐसा सुनने में आया है कि राम और लक्ष्मण, दोनों भाई महान योद्धा हैं और सुग्रीव के पीछे उनका हाथ है । इसी राम ने विराध, खर, दूषण और कबंध का वध किया है ।" यह कह कर तारा ने बालि को फिर इस प्रकार से सलाह दी:

"राम से विरोध मोल लेने के बजाय आप सुग्रीव से मित्रता कर लें और उसे वापस बुला कर युवराज का पद सौंप दें । आप दोनों एक ही कोख से जन्मे हैं । सुग्रीव कोई पराया नहीं । आपका अपना है । आप ज़रा

सोचें । मैं आपकी भलाई की सोच कर ही यह सब कह रही हूँ ।"

तारा की बातें महाबली बालि को पसंद नहीं आयीं । उसने तारा की भर्त्सना करते हुए कहा, "यह तुम क्या कह रही हो? उधर सुग्रीव मुझे युद्ध के लिए ललकार रहा है और इधर तुम मुझे यह सीख दे रही हो । एक बात याद रखो! किसी महावीर के लिए युद्ध से एक कदम भी पीछे हटना, मौत से बदतर समझा जाता है । राम से तुम ऐसे ही डर रही हो । अकारण वह मुझे क्यों मारेगा? तुम मेरे पीछे-पीछे ऐसे मत आओ । मैं सुग्रीव का गर्व चूर करना जानता हूँ । वायदा करता हूँ, मैं उसकी जान नहीं लूँगा । वह वैसे ही मेरी मार सह नहीं सकेगा और बहुत जल्द कायर की तरह वह युद्ध के मैदान से भाग खड़ा होगा ।"

अब तारा क्या कहती! और कर क्या सकती? उस की एक भी सुनने को बालि तैयार नहीं था । उसने बालि की परिक्रमा की और उसकी युद्ध में विजय की कामना करते हुए उसे विदाई दी ।

बालि आगे बढ़ा । सामने सुग्रीव युद्ध के लिए तैयार खड़ा था । उसने अपने लंगोट को थोड़ा कसा और फिर वह सुग्रीव से भिड़ गया ।

मुकाबला तगड़ा था । सुग्रीव ने एक साल वृक्ष उखाड़ा और जोर से बालि पर दे मारा ।

इस आघात ने बालि को विचलित कर दिया, लेकिन कुछ ही देर में सुग्रीव की शक्ति धीरे-धीरे क्षीण होने लगी ।

अब विचलित होने की बारी सुग्रीव की थी । वह मजबूर होकर बार-बार इधर-उधर देख रहा था ।

राम की दृष्टि सुग्रीव पर ही थी । वह उसकी स्थिति भांप गये और उन्होंने बालि का वध करने के लिए एक उपयुक्त बाण चुना । बाण को धनुष पर चढ़ाया और निशाना बांधकर धनुष की डोरी अपने कान तक खींच छोड़ दिया ।

बाण सर-सर की तीखी ध्वनि करता हुआ सीधा बालि की छाती में लगा और उसे चीरता हुआ दूर निकल गया । एक ही वार से बालि लुढक गया था, लेकिन उसके प्राण अभी बाकी थे, क्योंकि उसके गले में इंद्र द्वारा दी गयी कांचन माला थी । उसकी आंखें अब उसे मार गिराने वाले को खोज़ रही थीं । इतने में राम और लक्ष्मण उसके सामने चले आये । तब ताकत बटोरकर बालि राम से बोला :

''तुम राज-पुत्र हो । गुणवान हो । सब शास्त्रों के ज्ञाता हो, और अपूर्व पराक्रमी भी हो । जब मेरा किसी और से युद्ध हो रहा था, तब तुमने मुझ पर बाण कैसे चलाया? इससे तुम्हें कौन सी माहनता मिली? मैं यह नहीं जानता था कि तुम छिपकर भी दूसरों पर वार करते हो! मेरा विश्वास था कि तुम में सभी राजोचित गुण हैं । तुम संयम, आत्मशुद्धि, सत्य, धर्म, पराक्रम, सहनशीलता इत्यादि का पालन करते हो । इसीलिए तारा के मना करने पर भी मैं युद्ध करने चला आया । मैं तुम्हारा यह रूप नहीं जानता था । मैंने न ही तुम्हें कोई हानि पहुँचायी और न ही किसी प्रकार का अतिक्रमण किया । तब तुमने मुझे क्यों मारा । मैं यह मानने को बिलकुल तैयार नहीं हूँ कि तुमने मुझे शिकार के धोखे में मारा है । अब मेरी समझ में आया कि तुम्हारे जैसे राजाओं के कारण ही प्रजा कष्ट पाती है, और धरती का पालन भी ठीक से नहीं हो पाता । मुझे आश्चर्य होता कि तुम जैसा कुटिल और पापी, महाराजा दशरथ के यहाँ कैसे पैदा हो गया! अपना पराक्रम इस तरह दिखाने के बजाय तुमने अपने प्रति अन्याय करने वाले रावण का प्रतिकार क्यों नहीं किया । तुम ने यदि मुझसे मेरे सामने आकर युद्ध किया होता तो मैं तुम्हें अब तक यमलोक पहुँचा चुका होता । मुझसे कहा होता तो मैं एक ही दिन में सीता को ढूँढ़कर तुम्हारे पास पहुँचा देता । निःसंदेह मुझे मार कर सुग्रीव वानरों का राजा बनना चाहता

है । निःसंदेह उसने इस काम में तुमसे मदद भी ली है, लेकिन छिप कर वार करना कहाँ का न्याय है!"

अपनी सुध-बुध खोते बालि की जली-कटी बातें सुनकर राम को उत्तर देना ही पड़ा । वह बोले, "तुम धर्म की सूक्ष्मता नहीं जानते । इसीलिए तुमने मेरे लिए ऐसे अपशब्द कहे । यह तो जानते ही हो कि इस समूची धरती पर इक्ष्वाकु वंशियों का राज्य है । इसका राजा भरत है । उसी की आज्ञा पर धर्म की रक्षा करते हुए हम विचर रहे हैं । तुमने तो धर्म-पथ छोड़ दिया था । छोटा भाई पुत्र समान होता है । तुमने उसकी पत्नी रुमा का अपहरण किया । उस अपराध का तुमने यह दंड पा लिया है । इधर सुग्रीव मेरे लिए लक्ष्मण के समान है । उसकी मदद करना मेरा कर्तव्य था । इसलिए तुम पर बाण चलाना किसी तरह भी अधर्म नहीं कहलायेगा । तुम्हें छिप कर मारना भी गलत नहीं लगता । वन में मृगों को मारने के लिए छिपकर ही वार करना पड़ता है, या जाल फैलाकर वंचना से ही काम लेते हैं। राज-ऋषि ही एक अनुपयोगी जानवर हो ।"

प्राण छोड़ने से पहले बालि ने राम को संबोधित करते हुए कहा, "अपनी मृत्यु पर
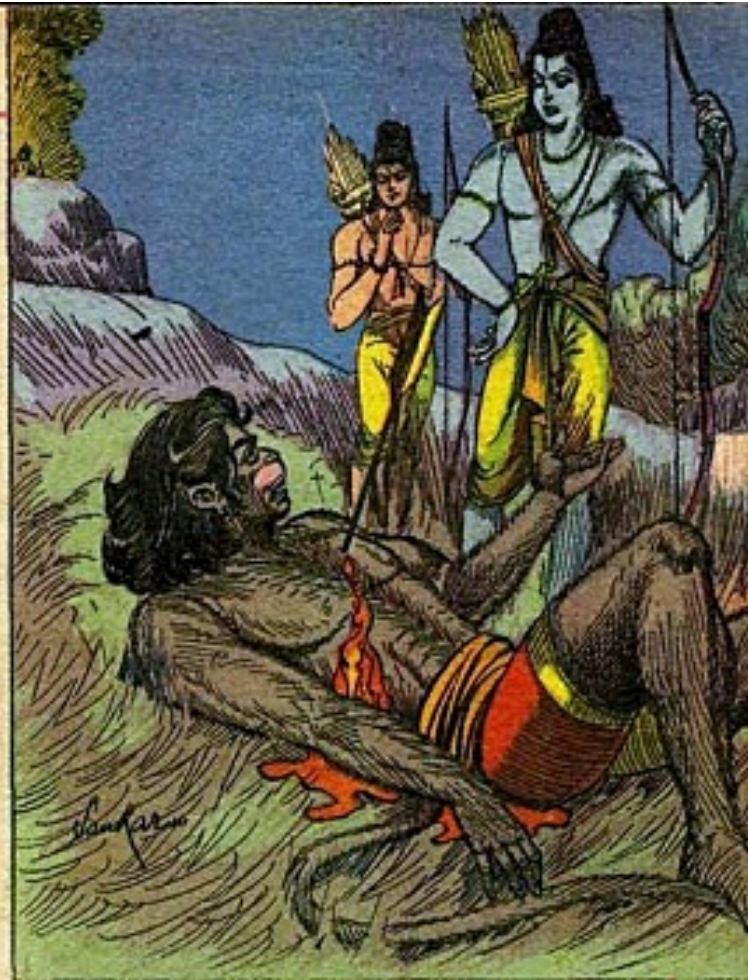
मुझे दुःख नहीं है । तारा और अन्य बंधु-बांधवों को लेकर मेरे मन में कोई चिंता नहीं । केवल अंगद को लेकर मैं थोड़ा चिंतित हूँ । वह मुझे जी-जान से प्यार करता है । मुझे लेकर वह चिंताग्नि में जल कर समाप्त हो सकता है । उसकी रक्षा करो । उसे भी सुग्रीव की तरह स्वीकारो, और मेरे कारण सुग्रीव तारा का अपमान न करे, इसका भी ध्यान रखो ।"

राम ने बालि को वचन दिया कि ऐसा ही होगा । अब बालि अपनी संज्ञा लगभग खो चुका था । इस बीच तारा को बालि के बोर में खबर मिल चुकी थी । दुख से भरी हुई वह अपने पुत्र अंगद के साथ किष्किंधा से चली

आयी। रास्ते में उसे कुछ वानर मिले। वे बोले, "तारा! लौट जाओ, और अपने पुत्र की रक्षा करो। राम के रूप में मृत्यु आयी हुई है। वह तुम्हारे पति को तो लिये जा रही है। अब तुम नगर के द्वार बंद करवा दो और अंगद का राज-तिलक करवा दो, वरना हो सकता है सुग्रीव और उसके साथी किष्किंधा को अपने अधिकार में ले लें और तुम्हें वहाँ खड़े होने की जगह भी न मिले।"

वानरों की बात सुनकर तारा तिलमिला गयी और बोली, "जब मेरा पति ही नहीं रहा, तब मैं इस पुत्र, राज्य और शरीर का क्या करूँगी! मैं भी अपने पति के साथ समाप्त हो जाऊँगी।"

यह कहकर तारा अपना माथा और छाती पीटने लगी और उसी अवस्था में रोती-चिल्लाती धराशायी हुए बालि के निकट पहुँची। राम और लक्ष्मण वहाँ पहले ही मौजूद थे।

तारा और अंगद को देखकर सुग्रीव काफी दुखी हुआ। तब हनुमान ने तारा को सांत्वना देते हुए कहा, "तारा, जो आता है उसे एक न एक दिन जाना ही होता है। मृत्यु सबके लिए निश्चित है। अब तो तुम अपने बारे में, और अपने पुत्र के बारे में सोचो। अपने पुत्र का जीवन सुधारना तुम्हारा कर्तव्य है। बालि महान आत्मा था। उसे तो उत्तम लोक प्राप्त हुआ ही होगा। अब तुम अंगद के राज-तिलक की तैयारियाँ करो।"

हनुमान की बात सुनकर तारा बोली, "हनुमान! जो यह सब तुम मुझे बता रहे हो, वह मेरे बस का नहीं। यह तो सुग्रीव द्वारा ही संपन्न होगा। मेरी यात्रा तो बालि के साथ ही होगी।"

समस्या का हल

उन दिनों विमलपुरी पर राजा यशोवर्मा का राज्य था । राजा हर वक्त जनता की भलाई में जुटे रहते । उसी की समस्याओं पर प्रायः बहस चलती । इस बहस के चलते वह अपने आराम की बात को भी भूल जाते । उनके निकटवर्ती लोग उनकी इस आदत पर जब परेशान होते तो राजा कहते, ''प्रजा की समस्याओं को एक तरफ रखकर यदि मैं विश्राम करने की सोचूँ भी तो नहीं कर पाऊँगा । दर असल, राजा का काम समस्याओं से भागना नहीं, उनका हल ढूंढना है!'' राजा के मन की थाह लेना, सचमुच कोई आसान काम नहीं था!

एक बार विमलपुरी में अकाल पड़ा । लगातार तीन वर्षों तक वर्षा नहीं हुई । लोगों के सामने तरह-तरह की तकलीफें उठ खड़ी हुईं । दुश्मन की आँख भी अब उन्हीं पर लगी थी । पड़ोस के राजा वीरसेन ने मौके का फायदा उठाया और विमलपुरी पर युद्ध की घोषणा कर दी ।

यह तो विमलपुरी पर मुसीबत का पहाड़ टूटने जैसी बात थी । राजा यशोवर्मा ने अपने मंत्रियों से सलाह की । सभी मंत्रियों ने एक ही राय दी, ''प्रभु, अकाल के कारण देश में चारों ओर अशांति फैली हुई है । इस हालत में यदि हम युद्ध करते हैं तो हमें कई तरह की दूसरी परेशानियों का सामना करना पड़ेगा । इसलिए इस हालत में वीरसेन से संधि कर लेना ही ठीक होगा । इसी में हमारी भलाई है ।''

''संधि करने की बात मुझे बिलकुल पसंद नहीं । क्या आप लोग जानते नहीं कि युद्ध-रूपी समस्या का हल संधि कभी नहीं होता । दूसरे शब्दों में, समस्या से डर कर

मदनलाल वर्मा

भागना इसका हल नहीं । मेरे विचारों से आप लोग अच्छी तरह परिचित हैं । संधि करने से तो बेहतर है कि हम युद्ध करें, चाहे हम हार ही जायें ।" यशोवर्मा ने उनकी बात काटी ।

"प्रभु, अकाल के सामने हमें युद्ध की समस्या काफी छोटी लग रही है । वर्तमान स्थिति में संधि करना समय की मांग है । इसे समझौता मत समझिए," मंत्रीगण एक स्वर में बोले ।

"युद्ध करना मैं भी नहीं चाहता । पर समस्या से बच कर भागना भी मेरे स्वभाव के विपरीत है । इसलिए कोई दूसरा रास्ता ढूँढ़िये ।" यशोवर्मा ने कहा ।

मंत्रीगण वहाँ से उठकर पास के एक दूसरे कक्ष में चले गये । काफी देर तक मंत्रणा चलती रही । उन्हें विश्वास हो गया था कि राजा किसी तरह भी मानेंगे नहीं । उन्होंने उन्हें अव्यवहारिक और मूर्ख तक कहा ।

कुछ ही देर बाद वे सब फिर राजा के सामने थे और बोले, "महाराज, हम कल ही आपको कुछ समाधान दे पायेंगे । हमें सोचने के लिए और समय चाहिए ।" इतना कहकर मंत्री वहाँ से चले आये ।

मंत्री चले गये तो यशोवर्मा उदास हो गये । वह उसी उदासी में बैठे कुछ सोच रहे थे कि वहाँ विदूषक विशारद आ पहुँचा और राजा को गुम-सुम पाकर प्रश्न करने लगा, "महाराज, आप इतने परेशान नज़र क्यों आते हैं ।"

विदूषक चतुर था । वह तर्क- शास्त्र में प्रवीण था । और मीठी-मीठी बातें करना जानता था । इसलिए उसे अपने निकट पाकर राजा यशोवर्मा को बहुत संतोष हुआ । वह वैसे भी राजा को हास्य-विनोद की बातें बताकर हमेशा हँसाता रहता ।

"विशारद, क्या बताऊँ! बड़ी अजब उलझन में पड़ गया हूँ ।" राजा यशोवर्मा ने उत्तर दिया ।

"युद्ध वाली बात को लेकर ही आपको उलझन है न, राजन्?" विशारद ने फिर पूछा ।

"हाँ, है तो वही । पर उसका समाधान तुम क्या बताओगे!.. मैं ने इन दिनों 'बादरायणीयम' नाम का एक ग्रंथ पढ़ा । उसमें बताया गया है कि किसी भी ग्रंथ में बतायी गयी बात पर आंख मूंदकर विश्वास नहीं करना चाहिए ।" हँसते हुए यशोवर्मा ने कहा ।

"आप कहना क्या चाहते हैं प्रभु?" विदूषक ने फिर एक प्रश्न जड़ दिया ।

"मैं उस 'बादरायणीयम' में बतायी गयी बात पर विश्वास नहीं कर रहा । अब तुम ही बताओ, मैं उस ग्रंथ में बतायी गयी बात का पालन कर रहा हूँ या नहीं?" यशोवर्मा ने भी एक प्रश्न जड़ दिया ।

विदूषक कुछ देर सोचता रहा । फिर वह समझ गया । 'बादरायणीयम' नाम का तो वास्तव में कोई ग्रंथ नहीं हो सकता । महाराज ने ऐसे ही मज़ाक करने के लिए यह नाम गढ़ लिया होगा!

"प्रभु, यह भी कोई उलझन हुई? अभी तो आपने कहा था कि आप 'बादरायणीयम' नामक ग्रंथ पर विश्वास नहीं कर सकते । फिर उस की बात आप क्यों ले बैठे?" विशारद ने प्रश्न में प्रश्न जोड़ दिया ।

"एक बात और भी है । उस ग्रंथ की बात न मानना भी तो उसे मानना है!" राजा ने कहा । थोड़ी देर तक सोचते हुए दूषक विशारद ने हँसकर कहा, "प्रभु, यह सब मैं नहीं जानता । मैं तो यह जानता हूँ कि आप हमेशा सच बोलते हैं । आपने जब यह कहा कि आप उस ग्रंथ की बात पर विश्वास नहीं कर रहे, तो मेरे लिए इसका अर्थ यही था कि आप वाकई नहीं कर रहे!"

अब राजा यशोवर्मा ऊब चुके थे । वह तुनक कर बोले, "विशारद! झूठी प्रशंसा करके बात को टालने की कोशिश मत

करो । ठीक-ठीक बताओ कि मैं उस ग्रंथ का पालन कर रहा हूँ या नहीं । यह मेरा आदेश है । क्या तुम मेरे आदेश की अवज्ञा कर सकतें हो?"

एक पल के लिए विशारद चुप हो गया । फिर हँसते हुए बोला, "प्रभु, यदि आप स्वयं भी मुझे ऐसा आदेश दें कि मैं आपके प्रति उलटा-सीधा व्यवहार करूँ तो मैं तब भी नहीं कर सकता । तब मैं आपके आदेश की अवेहलना कैसे कर रहा हूँ? खैर, मैं इस समस्या के बारे में सोचकर बताऊँगा ।"

यशोवर्मा को लगा कि विदूषक की बातों में ज़रूर कोई रहस्य है । फिर वह एकाएक ताड़ गये । बोले, "वाकई तुम बुद्धिमान हो । तुमने अपनी बातों से ठीक वैसी ही समस्या खड़ी कर दी जैसी मैंने खड़ी की । यदि मैं स्वयं भी तुम्हें अपने प्रति प्रतिकूल व्यवहार करने के लिए कहूँ तो तुम वैसा व्यवहार नहीं करोगे । यह भी एक प्रकार से मेरे आदेश का उल्लंघन है । खैर, मतलब यह कि ऐसी समस्याओं का कोई हल नहीं ।"

"क्यों नहीं राजन्! आप यदि यह भी कहें कि आपको छोड़कर दूसरा कोई भी कहे, तब भी आपके आदेश का उल्लंघन न करूँ, तो यह अपने को अलग-थलग कर लेना होता है, और यही वास्तव में समस्या का समाधान होता है । 'बादरायणीयम' के मामले में भी ऐसा ही है । उस ग्रंथ में इस प्रकार लिखा होना चाहिए—'बादरायणीयम' को छोड़कर और किसी भी ग्रंथ में लिखी बात पर आँख मूंदकर विश्वास न करो ।" अब विशारद का बारी थी ।

"अच्छा, यदि 'बादरायणीयम' में ऐसी छूट न हो, तब समस्या का समाधान क्या है?" राजा यशोवर्मा ने फिर प्रश्न किया ।

"छूट नहीं रहे तो उसका सृजन कर लेना चाहिए । और कोई रास्ता नहीं," विशारद का उत्तर था ।

"ऐसी छूट का सृजन तो समस्या से बच

निकलने के समान होगा! यह उसका समाधान तो नहीं!" यशोवर्मा बोले ।

"आपकी दृष्टि में समस्या का समाधान क्या होत है?" विदूषक विशारद ने प्रश्न किया, "समस्या का अंत क्या समस्या का समाधान नहीं?"

"बिलकुल नहीं । समस्या का अंत करना समस्या से दूर दौड़ जाना कहलायेगा । जब प्रजा की अनेक समस्याएँ हों, तब मेरा विश्रामगृह की ओर जाना भी समस्या से भागना होगा ।" यशोवर्मा अपनी बात पर अड़े रहे ।

"राजन्, एक बात सोचिए । विश्रामगृह में आराम करने से आपके मन को शांति मिलती है, और उस वक्त आप समस्या का कोई हल भी पा सकते हैं । तब विश्रामगृह की ओर जाना समस्या से भागना कैसे हुआ?" विशारद किसी भी तरह तर्क से पीछे नहीं हट रहा था ।

यशोवर्मा को लगा कि विदूषक की बातों में कुछ सच्चाई है । उसने धीरे से मुस्कराते हुए कहा, "विशारद, तुम ठीक कहते हो! मैंने ही तुम्हारी बात पर ध्यान नहीं दिया । एक प्रकार से मेरे सिद्धांत में रही कमी को तुमने पूरा किया । अच्छा, कुछ समस्याओं से पलायन ही क्या केवल समाधान होता है? इस प्रश्न का सही उत्तर नहीं मिला ।"

विशारद थोड़ी देर चुप रहा । फिर बोला, "हाँ प्रभु, यही समाधान है । और कोई चारा नहीं । ऐसी स्थिति में इस पलायन को पलायन न कहकर 'समस्या का समाधान' कहना बेहतर होगा ।"

"विशारद, तुम्हारा तर्क तगड़ा है । तुमने सहज ही मेरी एक गहन समस्या का हल दे दिया ।" और यह कहते हुए राजा यशोवर्मा ने विदूषक विशारद को एक बहुत कीमती उपहार दिया ।

दूसरे दिन राजा ने स्वयं ही मंत्रियों से कहा कि वीरसेन से संधि कर लेनी चाहिए, और यही उनका निर्णय है ।

महाकाव्य की रचना

विष्णुपुर नाम के एक गांव में मुरलीधर नाम का एक व्यक्ति रहता था। वह आपने को एक महान कवि मानता था। उसने दो महीने खूब जमकर मेहनत की और एक काव्य की रचना कर डाली। रचना करने के बाद उसने उसे बार-बार पढ़ा। उसे लगा, यह वाकई एक महान कवि की महान् रचना है। लेकिन वह चाहता था कि यह प्रशंसा वह किसी और के मुंह से सुने।

उसी गांव में वाणीनाथ नाम का एक महापंडित रहता था। संस्कृत और अन्य भाषाओं में उसने प्रायः हर महत्वपूर्ण काव्य पढ़ रखा था। मुरलीधर ने सोचा, यदि वाणीनाथ उसकी प्रशंसा में कुछ शब्द कह दे तो बात बन जायेगी।

एक दिन वह उसी के यहां गया और विनती के स्वर में उससे बोला, "पंडित जी, मैंने एक काव्य की रचना की है। यदि उसे सुनाने के लिए आप थोड़ा-सा समय दे सकें तो....?"

वाणीनाथ ने फौरन 'हां' कह दी। मुरलीधर उसी क्षण अपना काव्य सुनाने बैठ गया। लेकिन उसने अभी ज़्यादा पंक्तियां नहीं पढ़ी थीं कि वाणीनाथ बोला, "बाकी कल! अब मुझे कोई दूसरा काम करना है!"

"ठीक है, मैं कल सुबह-सुबह ही आपकी सेवा में आ जाऊंगा," मुरलीधर बोला और वहां से चला आया।

दूसरे दिन वह बहुत सवेरे ही पंडित वाणीनाथ के यहां पहुंच गया और उसने अपना काव्य-पाठ शुरू कर दिया। आज भी वाणीनाथ ने वही वाक्य दोहराय, "बस, यहीं रोक दो। बाकी कल सुनेंगे। मुझे एक काम याद आ गया है!"

इस तरह एक हफ्ता बीत गया। काव्य-पाठ खत्म होने को नहीं आ रहा था, जब कि वह उसे एक बार में ही शुरू से

श्रीधर श्रीवास्तव

आखिर तक पढ़ जाना चाहता था। पर ऐसी नौबत आ ही नहीं रही थी। ऐसे तो एक महीना भी लग सकता है, मुरलीधर ने सोचा।

एक दिन उसने दिल मज़बूत करके कह ही दिया, "आप क्या मेरे लिए पूरा दिन नहीं निकाल सकते?"

"किसलिए? उससे तुम्हें क्या मिलेगा?" वाणीनाथ ने उल्टे प्रश्न कर डाला।

"मैं अपना काव्य एक ही बैठक में सुनाना चाहता हूँ," मुरलीधर ने तत्परता से उत्तर दिया।

"अच्छा, पहले यह बताओ कि क्या सोचकर मुझे यह काव्य सुनाना चाहते हो?" वाणीनाथ ने फिर प्रश्न किया।

"शायद आपको लगे कि यह एक महाकाव्य है," मुरलीधर ने उत्तर दिया।

"अच्छा, तो यह महाकाव्य है! अरे शुरू में ही क्यों नहीं बताया? यों ही इतना कष्ट उठाते रहे!" वाणीनाथ ने सहानुभूति दिखाते हुए कहा।

"महोदय, मेरा कहना काफी नहीं। यह तो स्वयं ही आपके मुंह से निकलना चाहिए था," मुरलीधर उसका व्यंग्य समझ नहीं पाया।

"अगर मेरे कह देने से ही यह महाकाव्य बन सकता है तो मैं कह रहा हूँ कि यह एक महाकाव्य है! ठीक है?" वाणीनाथ ने फिर व्यंग्य किया।

"आपके अलावा क्या दूसरा महापंडित भी इसे महाकाव्य कह सकता है?" मुरलीधर ने मासूम बने एक और प्रश्न किया।
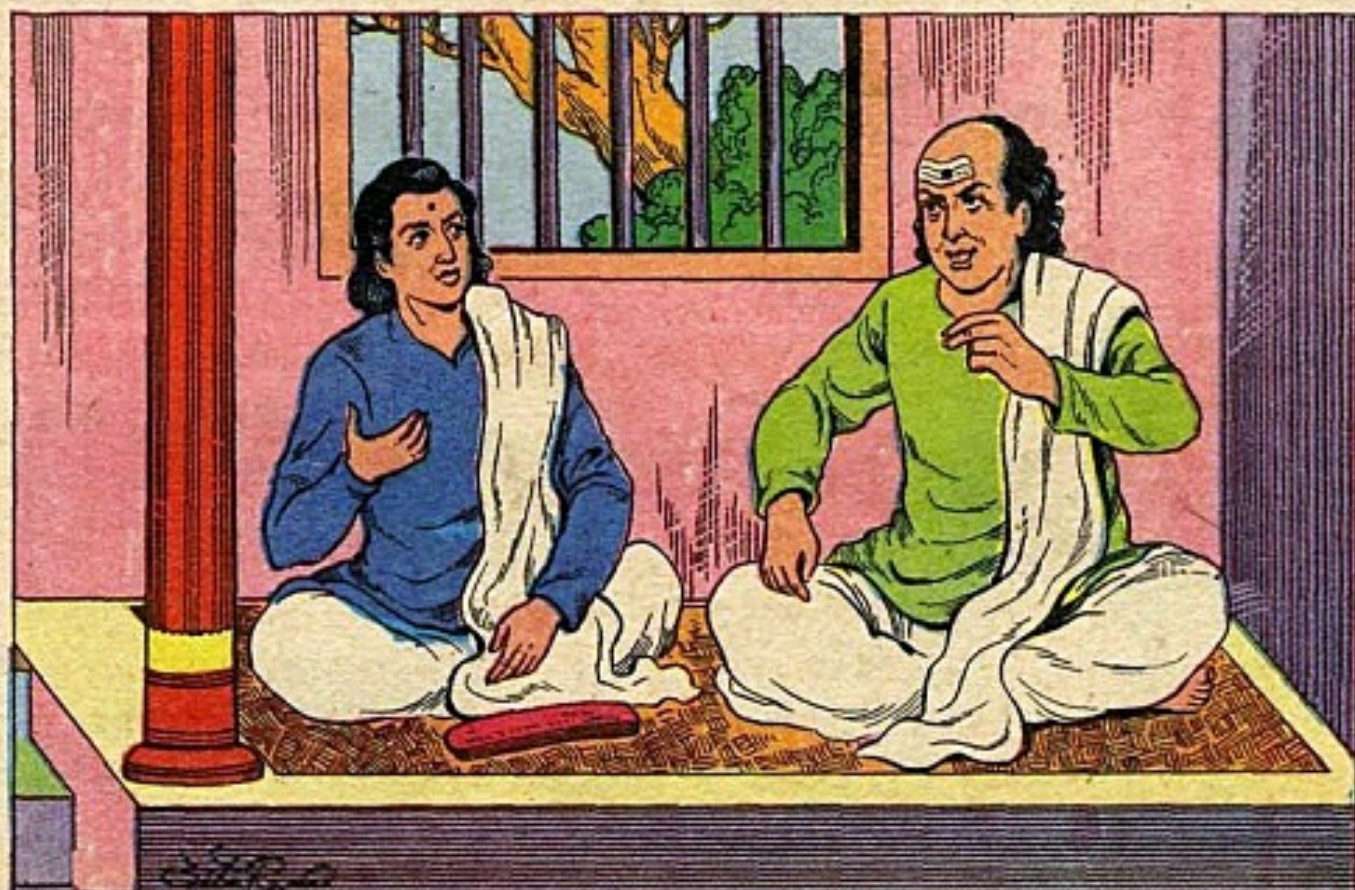
"हां, क्यों नहीं! पर उस महापंडित को तुम्हें वचन देना होगा कि तुम यह महाकाव्य उसे सुनाओगे नहीं!" वाणीनाथ ने फिर व्यंग्य किया ।

महापंडित वाणीनाथ की बात पर मुरलीधर चौंका । "बिना सुने उसे कैसा पता चलेगा कि यह एक महाकाव्य है?" उसने फिर प्रश्न किया ।

"बेटा, इसका एक कारण है । इसे सुनना काफी कष्टदायी है । अगर किसी को पहले ही पता चल जाये कि महाकाव्य मान लेने से उसे सुनने के कष्ट से बचा जा सकता है, तो कोई भी पंडित इसे महाकाव्य मानने को तैयार हो जायेगा," वाणीनाथ ने फिर व्यंग्य में लपेटकर अपनी बात कही ।

"नहीं, मैं इस तरह से इसे महाकाव्य के रूप में नहीं मनवाना चाहता । आप कृपया बताइए कि इस में कैसे-कैसे परिवर्तन करने से यह महाकाव्य कहला सकता है?" मुरलीधर ने फिर एक प्रश्न किया ।

"बेहतर हो तुम इसका नाम ही महाकाव्य रख दो । तब हर कोई इसे महाकाव्य नाम से पुकारेगा! और कोई उपाय मुझे सूझ नहीं रहा," वाणीनाथ ने एक और व्यंग्य किया ।

अब कहीं जाकर मुरलीधर को पता चला कि पंडित वाणीनाथ को उसका काव्य पसंद नहीं आया है । तब उसने दु:खी होकर कहा, "महोदय, यदि यह काव्य आपको पसंद नहीं आया था तो यह आपने पहले ही क्यों नहीं कह दिया!"

मुरलीधर के कथन पर वाणीनाथ हंस पड़ा । "अरे पगले, जब मैं ने पहली बैठक में ही तुम्हारा काव्य सुनने से इंकार किया तो स्पष्ट था कि यह मुझे पसंद नहीं आया है । क्या यह इशारा तुम्हारे लिए काफी नहीं था? दूसरे, मैं तुम्हारी रचना का तिरस्कार करके तुम्हें ठेस भी पहुंचाना नहीं चाहता था!"

अब तो मुरलीधर के लिए पंडित वाणीनाथ के यहां एक पल भी बैठना मुश्किल हो गया और वह फौरन उठकर वहां से चल दिया ।
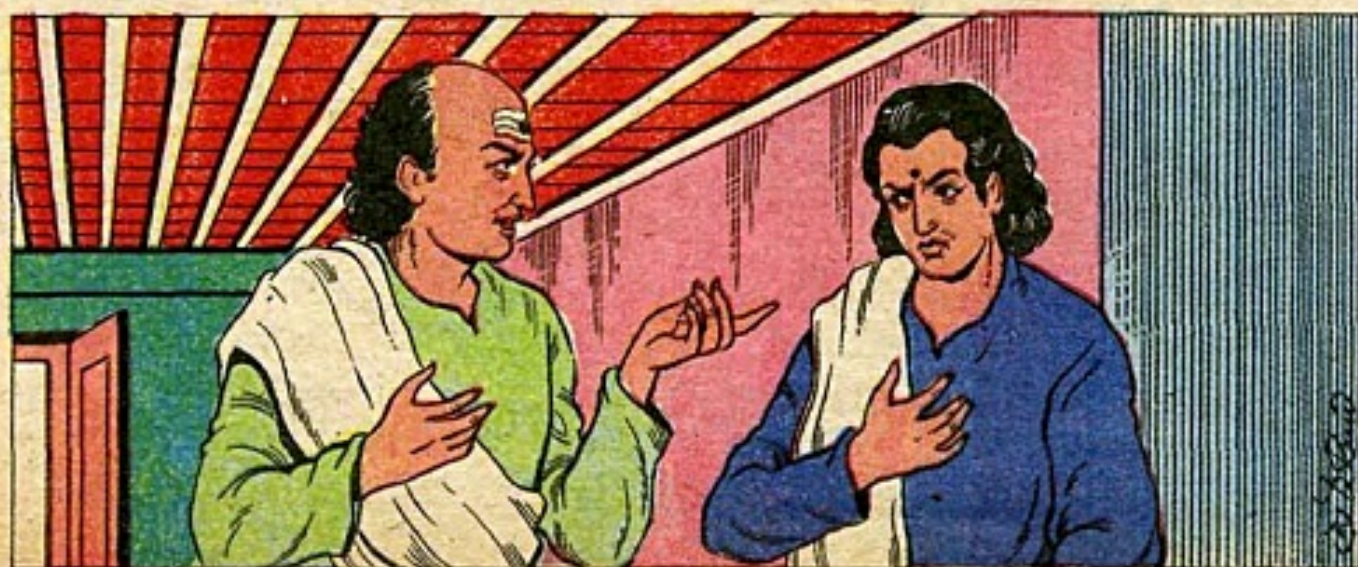
जैसे को तैसा

बात पुरानी है । एक गांव में रामसहाय नाम का एक किसान रहता था । उसकी पत्नी का नाम रधिया था । रधिया एक झगड़ालू औरत थी और झगड़ालू होने की वज़ह से झगड़ा करने का कोई मौका हाथ से नहीं जाने देती थी ।

एक दिन रामसहाय और रधिया पड़ोस के एक गांव से लौट रहे थे । रास्ते में एक आम का पेड़ दिख पड़ा । पेड़ पर कुछ आम कच्चे थे, और कुछ पके ।

"देखो, इस पेड़ पर कई पके आम हैं," रधिया अपने पति से बोली, "ज़रा पेड़ पर चढ़कर कुछ आम तो तोड़ लाओ । मैंने इस साल आम चखा ही नहीं ।"

"अंधेरा बढ़ता जा रहा है । हमें जल्दी से गाँव पहुँच जाना चाहिए । तुम्हें आम ही चखना है न! कल मैं टोकरा-भर बढ़िया आम मंगवा दूँगा ।" रामसहाय ने कहा ।

"मैं तो अभी आम खाना चाहती हूँ ।" रधिया अपनी ज़िद्द पर थी ।

रामसहाय लाचार हो गया । वह पेड़ पर चढ़ने के लिए उसके नीचे पहुँचा ही था कि पेड़ पर से कोई व्यक्ति फ़िसल कर सीधा उसके ऊपर आ गिरा । इससे रामसहाय भी गिर पड़ा और उसके एक पाँव में मोच आ गयी । वह पीड़ा से बिलबिलाने लगा ।

"अरे, कैसे आदमी हो तुम! क्या तुम्हारी आँखों पर पट्टी बंधी हुई है? मेरे पति पर तुम पहाड़ की तरह गिरे हो! मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगी ।" रधिया ने कहा ।

उस व्यक्ति ने उठने की कोशिश की और रामसहाय को भी सहारा दिया । फिर वह रधिया की ओर कातर दृष्टि से देखते हुए बोला, "मेरी इस में कोई गलती नहीं । पैर फिसलने से मैं गिर पड़ा ।"

रामसहाय पर गिरने वाले व्यक्ति का नाम

(२५ वर्ष पूर्व चंदामामा की कहानी)

गोपाल था । वह बेचारा सिर झुकाये सब कुछ सुनता रहा और झगड़ालू रधिया उसे गालियाँ देती रही ।

गांव पहुँचते ही रधिया ने पटेल के पास शिकायत की । रामसहाय ने मना भी किया, पर रधिया कहाँ मानने वाली थी । वह तो उलटे रामसहाय पर ही बरस पड़ी, "बड़े दब्बू आदमी हो, जी । तुम पर तो अगर पूरा गाँव ही गिर पड़े तो तब भी तुम चुप ही रहोगे ।"

खैर, पटेल ने तुरंत गोपाल को बुलवाया । गोपाल ने सारा किस्सा सच-सच कह दिया । पटेल को विश्वास हो गया कि गोपाल झूठ नहीं कह रहा और न ही उसने कोई अपराध किया है । इसलिए उसने रधिया को सलाह दी कि वह बात को जाने दे और उसे ज़्यादा न बढ़ाये ।

पर रधिया तो रधिया ही थी । तुनककर बोली, "देख लिया आपका इंसाफ! यह कमीना तो पेड़ की ड़ालों में छिपा बैठा था । जैसे ही मेरा पति पेड़ के नीचे पहुँचा, वैसे ही यह उस पर कूद पड़ा । आप कहते हैं बात को ज़्यादा न बढ़ाऊँ! वाह रे! आपसे नहीं बन पड़ता तो कहिए । मैं कोई और द्वार खटखटाऊँ ।"

पटेल की समझ में आ गया कि रधिया के दिमाग में बात सीधे-सीधे नहीं जायेगी । वह बोला, "ठीक है, तुम्हें इंसाफ़ ही चाहिए न? तुम इस आम के पेड़ पर चढ़ो । गोपाल उसके नीचे जायेगा, और तुम उस पर कूद पड़ोगी । हो गया न जैसे को तैसा?"

"पेड़ पर से मैं कूदूँ? अगर उस पर न गिर पायी तो मेरी हड्डियाँ ही टूटी समझो । और अगर उस पर भी गिरी तो भी मुझे चोट लग सकती है!" रधिया की आवाज़ में कुछ घबराहट थी ।

"तो यह सब गोपाल के साथ भी तो हो सकता था । तुम उस की बात पर विश्वास क्यों नहीं करती?" पटेल ने प्रश्न किया ।

अब जाकर कहीं रधिया की अकल में बात पड़ी । लज्जा से उसका सिर झुक गया था । वह अपने पति के साथ वहाँ से चलती बनी ।
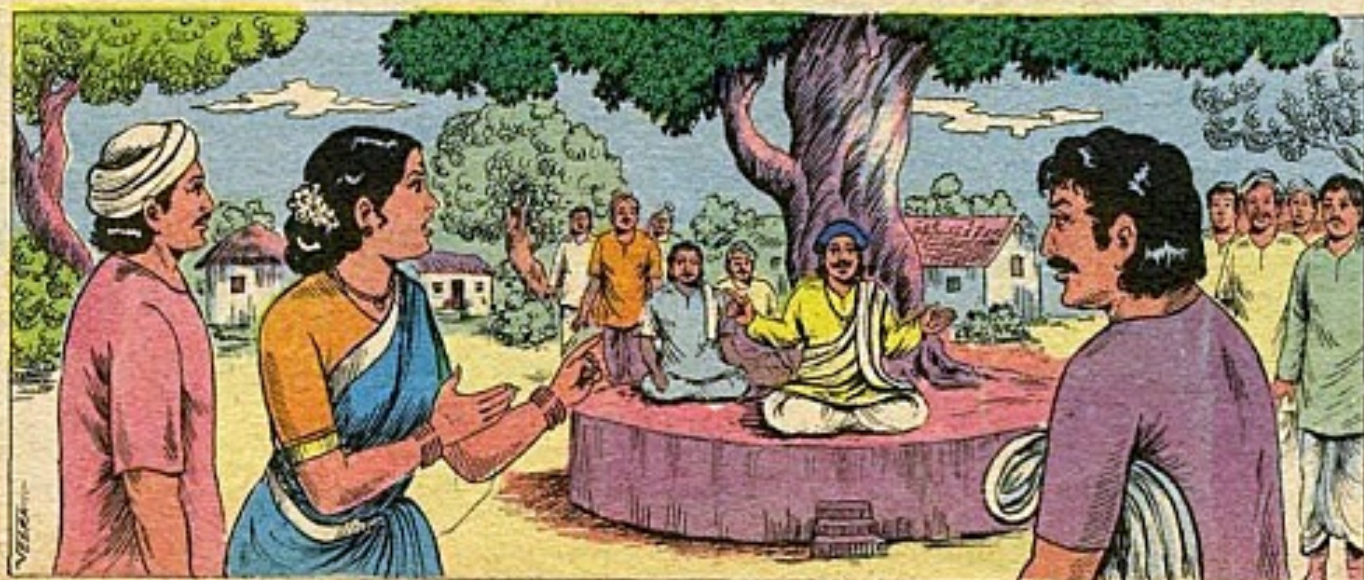
दूर-दूर तक उड़ने वाले पक्षी

एक पक्षी है आर्कटिक टेर्न । यह उत्तरी यूरोप और ग्रीनलैंड में पाया जाता है । है यह छोटा-सा समुद्री जीव, लेकिन उड़ान भरता है यह ११,००० मील की ओर जा पहुंचता है प्रवास के लिए यह संसार के दूसरे छोर पर, यानी एंटार्किटा में । और साल भर बाद फिर वहीं वापस आ जात है!

लुप्त होते नियागरा प्रपात

उत्तरी अमरीका के नियागरा प्रपात विश्व प्रसिद्ध हैं, और कई हज़ार वर्ष पुराने माने जाते हैं । लेकिन इधर ये एक वर्ष में ३ फुट की दर से पीछे हट रहे हैं, यानी आज से १०,००० वर्ष पहले ये जहां थे, वहां से अब ७ मील या ११ कि.मी. दूर हैं । हो सकता है, अगले २५,००० वर्षों में ये पीछे हटते-हटते वापस 'लेक एरी' में ही पहुंच जायें ।

भीमकाय मछली

एक मछली है प्लैंकटन । बहुत लंबी-चौड़ी, लेकिन खतरनाक बिलकुल नहीं । और खाती है यह शार्क और व्हेल मछलियां, और खाकर ५९ फुट तक लंबी हो जाती है । तब इसका वज़न ४२.४ टन हो जाता है ।

RAMBO IV
No more evil, injustice and crime will be tolerated in this city. The relentless crusader is here. With his famed Zap Gun (the three sound gizmo that's the terror of the underworld) and his fleet of rough 'n tough ready-for-action vehicles — Wrecker, Super Dumper and Fire Engine. And of course, his missile-firing Helicopter. So...breathe easy. The one man army is here.
SAMMO
Mechanical and electronic toys
CHANDAMAMA TOYTRONIX
In collaboration with Sammo Corporation, S.Korea
Chandamama Toytronix Private Limited, Chandamama Buildings, 188, NSK Salai, Vadapalani, Madras 600 026
Mudra:M CTPL:4093
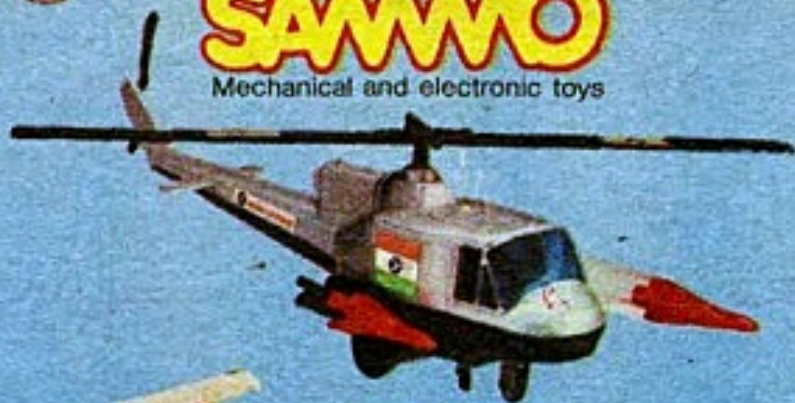
फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी १९९१ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

S. Maheswar Rao
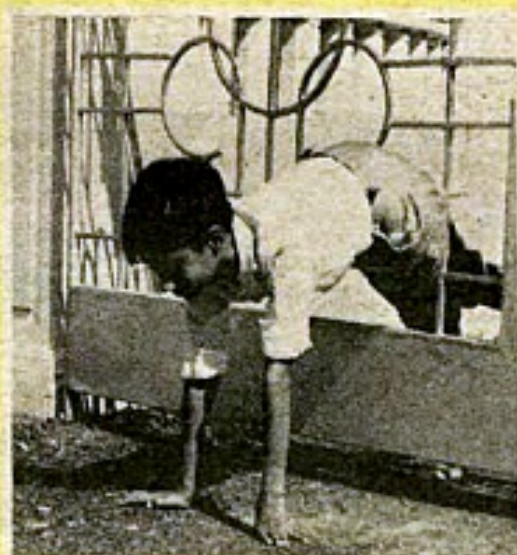
M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ नवम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

सितम्बर १९९० की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो : पानी की कोई आस नहीं!

द्वितीय फोटो : हम तीनों को प्यास नहीं!!

प्रेषक : पप्पू (अमर), द्वारा सै. वाहिद हुसैन, म.नं.-एस. ३/११७, अर्दली बाज़ार, वाराणसी

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६/-

चन्दा भेजने का पता :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

The stories, articles and designs contained herein are exclusive property of the Publishers and copying or adapting them in any manner will be dealt with according to law.

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. ८१/-   वायु सेवा से रु. १५६/-

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. ८७/-   वायु सेवा से रु. १५६/-

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

वे आ गये!
वे यहाँ
पहुँच गये!
भारत के बच्चों के
दिल बहलाने के लिए
खूबसूरत कडल
परिवार के सदस्य।
बाउ बाउ और फ्लापी कुत्ते (वुः! वुः!)
जम्बो हाथी, बॉबिट खरगोश, आप के दोस्त
टेडी और स्पोर्टी रीछ, चीं चीं करता हुआ
आप के घर का चूहा – डॉल्फिन फ्लिपर
और अपने दो जुड़वा बच्चों के साथ
बनी की तो बात ही क्या?
कौन भराव का उपयोग करें,
कैसा आकार दें,
कौन रंग का प्रयोग करें...
बच्चों के हथियाने की
कठोरतम परीक्षा में पास हों
और हमेशा सुरक्षित र
इसलिए इन खिलौनो
को रूपायित करने में हम ने
महीनों चिंतन किया है
CUDD ES
CHANDAMAMA TOYTRONIX
Chandamama Buildings, 188, NSK Sala
Vadapalani, Madras-600 02
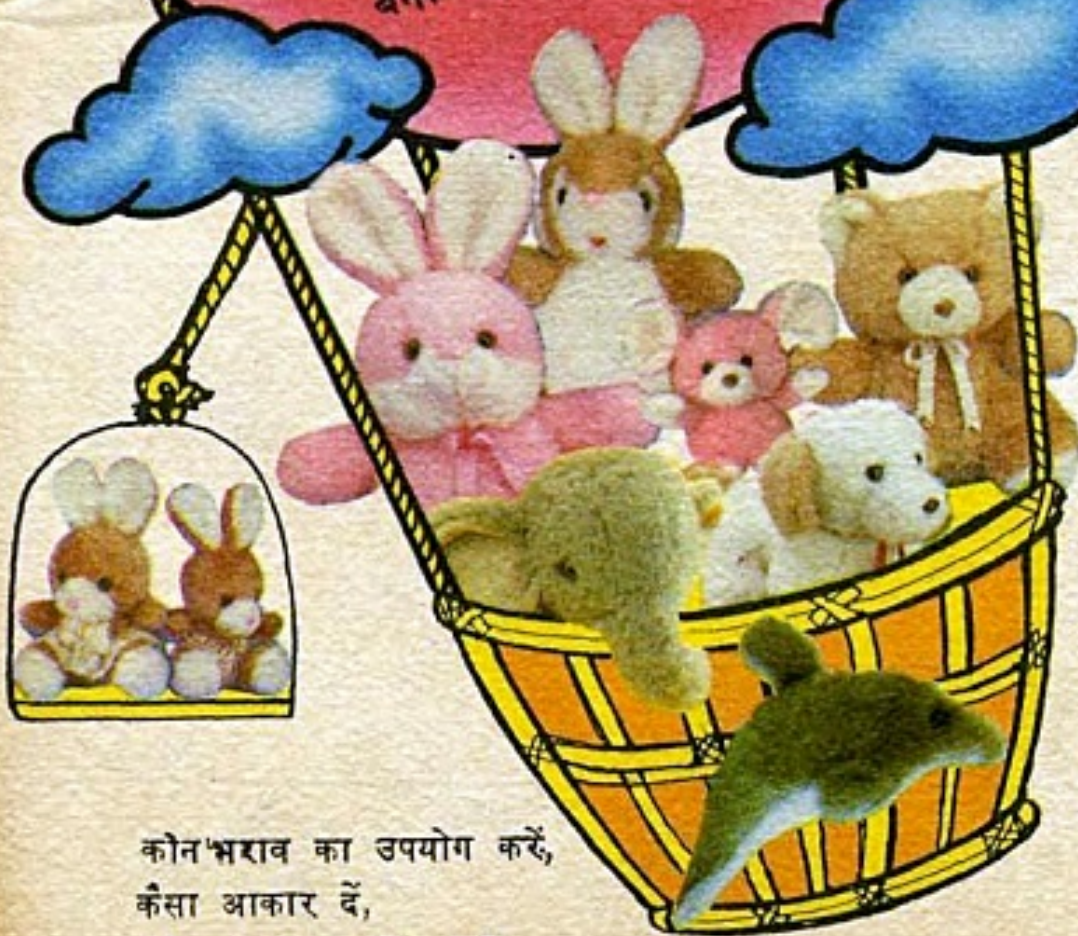
CHANDAMAMA (Hindi) November 1990 Regd. No. M. 5452

खास जायका दूध

और माखन के साथ,

सुनहरे 'गोल्ड'

की सुनहरी बात!

न्यूट्रीन

GOLD

एक चाहे,
हरेक चाहे गोल्ड

Visesh/NC/9089/Hin